माननीय

श्री जगजीवनराम जी

को

जिनसे प्रेरणा पाकर

देश मे अनेक अधखिले जीवन

खिल उठे है

निवेदन

'अधखिली' श्री दास जी का व्यग्यात्मक उपन्यास है। इसका रग ही दूसरा है। इसमे वे एक व्यग्यकार के रूप मे हमारे सम्मुख आते है—ऐसे व्यग्यकार जिसकी दृष्टि इतनी पैनी है कि वर्तमान समाज के भीतर के खोखलेपन को स्पष्ट देख सकता है और जिसकी लेखनी इतनी तेज है कि उसे वह सहज ही मे निरावरण कर सकता है। श्री दास जी की लेखनी मे एक चमत्कारपूर्ण बात यह है कि आप तीखे से तीखा व्यग्य भी सरल हास्य के साथ कर जाते है और रोमास मे कही भी कमी नही आने पाती। साधारणतया रोमास और व्यग्य साथ साथ नही चलते परन्तु इस पुस्तक मे लेखक ने दोनो का अपूर्व मिश्रण किया है और यही उसकी सबसे बडी सफलता है। व्यग्य, हास्य और रोमास के अपूर्व सम्मिश्रण से उपन्यास का साहित्यिक सौष्ठव मानो दीप्तिमान हो उठा है और अधखिली कली मानो पूर्ण रूप से विकसित पुष्प हो गई है।

आधुनिक भारतीय जीवन के विभिन्न पहलुओ को अपनी पैनी दृष्टि से देखकर और उसके अन्तर की दुर्बलताओ पर अपनी समर्थ लेखनी से प्रहार करके व्यग्य के काटो से उसे कुरेदकर और हास्य के मधु से अनुलेपन कर उन्हे पूर्ण रूप मे स्वस्थ बना दिया है। भारतीय सभ्यता और सस्कृति की गहनतम चेतना से अभिभूत होकर इस पुस्तक मे स्थान-स्थान पर विदेशी रीति, व्यवहार और भाषा के अनुकरण की प्रवृत्ति पर क्षमतापूर्वक व्यग्य किये गये है—ऐसे व्यग्य जो हँसाते-हँसाते आँखो मे उँगली डालकर दोष-दर्शन करा दे। वास्तविकता के प्रकाश मे हमारे आधुनिक जीवन का बहुत ही रोचक प्रदर्शन इस पुस्तक मे किया गया है।

हिन्दी मे व्यग्य-साहित्य की कमी है। जीवन की जटिलताओ को क्षण भर भुलाकर जीवन के सुखो का सहास्य उपभोग करा सके ऐसा साहित्य हिन्दी मे कम है। 'अधखिली' इस कमी की बहुत कुछ अशो मे पूर्ति करेगा। पुस्तक मे हास्य का मधु, व्यग्य के काटे और रोमास की चमक तीनो ही समान रूप मे विद्यमान है जो पाठक को बरबस अपनी ओर आकृष्ट करके अपने मे उलझा लेते है। पुस्तक एक बार प्रारम्भ अरके अन्त तक बिना पढे छोडने को मन नही करता और पुस्तक समाप्त कर लेने पर ऐसा लगता है कि मन की अधखिली भावना मानो पूर्णरूप से प्रफुल्लित हो गई है।

इस पुस्तक का निश्चय ही हिन्दी ससार मे आदर होगा।

प्रकाशक

'अधखिली' पर कुछ सम्मतियाँ

"आधुनिक नवयवक और नवयुवतियो के जीवन पर आधारित व्यग्य और रग का अपूर्व सम्मिश्रण हुआ है तथा साहित्यिक सौष्ठव दीप्तिमान हो उठा है। वाग्वैदग्ध्य प्रचुर मात्रा मे है ।···भारतीय सभ्यता और सस्कृति की गहनतम चेतना से अभिभूत हो विदेशी रीति, व्यवहार और भाषा के अनुकरण की प्रवृत्ति पर क्षमतापूर्वक व्यग्य कसे गये है ।'

—देश

"लेखक ने हमारे मध्यवित्त चरित्र और सामाजिक जीवन की समस्त कमजोरियो पर अच्छा हास्य उँडेला है···वास्तविकता के प्रकाश मे हमारे आधुनिक जीवन का अच्छा प्रदर्शन किया गया है ।"

—युगान्तर

"रोमास के साथ व्यग्य का सफलतापूर्वक निर्वाह करने मे लेखक बेजोड है··· कई विभिन्न चरित्रो की सृष्टि की गई है ।"

—हिन्दुस्तान स्टैन्डर्ड

"बगाली साहित्य मे एक आविष्कार · भारतीय भाषाओ मे व्यग्य के अनधिकृत क्षेत्र मे भाषा के सफल प्रयोग का प्रकटीकरण ।"

—अमृतबाजार पत्रिका

"इनकी लेखनी तीक्ष्ण अस्त्र के समान काम करती है। पुस्तक एक सास मे समाप्त किए बिना सन्तोष नही होता है बगाली साहित्य की समृद्धि हुई है।"

—वसुमती

"लेखक के व्यग्य और सहानुभूति से मध्यवित्त वर्ग की यावज्जीवन विपत्तियो का कोई भी पहलू छूटने नही पाया है···पाठको के मन पर एक अमिट छाप पडकर रह जाती है। साहित्य क्षेत्र मे एक नवीन युग का सूत्रपात हुआ है ।"

—भारतवर्ष

"इसमे हास्य का मधु और व्यग्य के काटे दोनो ही है। लेखक ने पाठको की कृतज्ञता अर्जित की है ।"

—प्रवासी

"बिल्कुल विभिन्न प्रकार की पुस्तक। वास्तव मे साहित्य क्रमश गभीरतर होता जा रहा है। जीवन की जटिलताओ को भुलाकर जीवन-सुखो को सहास्य उपभोग करने का कोई साधन नही है। ऐसे ही समय श्री दास सरीखे लोकप्रिय साहित्यिक ने पाठको के भग्नप्राय मनो पर आशा की किरण उद्दीप्त की है ।"

—ऑल इण्डिया रेडियो

अधखिली

१

रंगमच पर पर्दा तडतड करतल-ध्वनि के बीच गिर गया। नाटक बडा जोरदार था। समस्या विवाह सम्बन्धी थी और वह भी बिल्कुल आधुनिक। गिरीश घोष के 'सिद्धार्थ' या डी० एल० राय के 'मेवाड-पतन' जैसी उसमे कोई चीज नही थी। एकदम सौ फी-सदी ताजा चुभता हुआ हल्का नाटक था।

यह 'आधुनिक' शब्द भी बडा मजेदार है। जो किसी प्राचीन श्रेणी मे नही आता, उसे मजे से आधुनिक कह दिया जा सकता है। बगला सगीत के क्षेत्र मे जो गाना कीर्तन, भटियाली या अन्य किसी, यहाँ तक कि रवीन्द्र सगीत मे भी सम्मिलित नही होता, वह आधुनिक माना जाता है।

प्रद्युम्न और सुरधुनि, नही-नही, सुरधुनि और प्रद्युम्न भी इस आधुनिक नाटक को देखने आये थे। बात यह है कि सुरधुनि पहले इस नाटक को देख गयी थी और अब अपने पति को नाटक दिखाने ले गयी थी।

नाटक का कथानक क्या है, इसे न जानने पर भी काम चल जायगा, क्योकि कथानक होता, तो फिर नाटक क्यो होता! नाटक की मूल घटना समाप्त होने के बाद उस पर कुछ दार्शनिकता का फाहा लगाने के लिए उपसहार के रूप मे एक दृश्य और जोड दिया गया था। नाटक मे कुछ गभीरता आ गयी थी, इसलिए घर लौटने से पहले दर्शको को हँसाकर खुश कर देना आवश्यक था।

अन्तिम दृश्य मे दूल्हे के दो मित्र परस्पर दिल खोलकर अपने-अपने मन की कह-सुन रहे थे। उनके मित्र की शादी तो खैर किसी

तरह सैकडो रगडे-झगडे और जोड-तोड के बाद हो गयी, पर अब स्वय उनका क्या बनेगा, इसी उधेडबुन मे लगे थे। दोनो की समस्या का सम्बन्ध विवाह से था। एक तो शादीशुदा होने के कारण विपत्ति मे था, दूसरा शादी का उम्मीदवार होने के कारण। दोनो ही बहुत दुखी थे। मानो शनिवार की सध्या को एक ने तो रेस मे दॉव लगाने के कारण अपना दिवाला पीट दिया था और दूसरा इस कारण दुखी था कि उसे रेस मे दॉव लगाने का मौका ही नही मिला।

एक मित्र बालो मे उँगली फेरते हुए अन्यमनस्क-सा होकर खडा हो गया। यह देखकर दूसरे मित्र ने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा—"कहो बिरादर, मित्र और मित्र-वधु का झगडा तो इस तरह

गोली से चाहे मार देना, पर धर्मावतार, नौकरी से हाथ न धोना पड़े.

चुटकियो मे ही निपट गया। घाते मे तुम्हे पेट भरकर पूडी-पकवान खाने का मौका मिला, फिर भी तुम दुखी दीखते हो ?"

दूसरे मित्र पर मानो दुनिया भर की मुसीबते टूट पडी हों। वह

खिन्न होकर बोला—"पूडी-पकवान से पेट तो भरा, पर मेरी जो असली विपत्ति थी वह कहाँ दूर हुई ?"

"क्यो क्या दफ्तर मे नोटिस मिल गया ?"

"नही बिरादर, अगर ऐसा होता तो अब तक खुदकशी कर लेता। नित्य सवेरे उठकर साहब से प्रार्थना करता हूँ कि हजूर, गोली से चाहे मार देना, पर धर्मावतार, नौकरी से हाथ न धोना पड़े !"

"फिर डर काहे का ?"

"डर यह है कि सात दिन से गृहिणी ने बोलने की हडताल कर रक्खी है !"

"वाह, तब तो तुम्हारे पौ-बारह है। चलो चैन तो मिली। न वाक्यरूपी वाणो का सामना है, और न मीठी छुरी का !"

पर मित्र इस बात से सतुष्ट नही हुए। दुखी होकर बोले—"पर आज ही अन्तिम रात है।"

"यह बात है ? भइ, कारण भी तो बताओ कि भाभी ने यह तूफान क्यो खडा किया ?"

"कारण क्या होता ? कारण यही था कि तुम लोगो से घटा-आध घटा बोल-बतला लेता था। आखिर हम लोगो के सीधे-सादे जीवन मे धरा ही क्या है,न ताजगी है और न कुछ लुत्फ है ! बस एक ही मसला है—नून, तेल और लकडी। इसमे न तो कोई डिस्क-वरी है, और न कोई सुसवाद। दिल बहले तो बहले, नही तो जाओ भाड मे। इसलिए तुम लोगोसे बोल-बतला कर; कुछ देर के लिए पर-निन्दा का पान चबाकर, जरा मुँह रसीला कर लेता था। कभी-कभी लौटने मे कुछ देर भी हो जाती थी !"

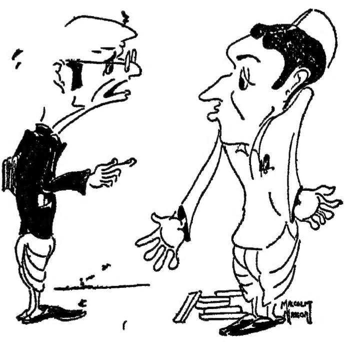

वही नून, तेल और लकड़ी.

"तो इसमे भाभी को क्या एतराज़ है?"

"एतराज सिर्फ एक है। उनका कहना है कि मै खूब रगरेलियाँ करता हूँ, और वह घर मे अकेली सारे कसाले झेलती है।"

"तो इस बात का इलाज क्या हो ? ऐसा तो हो नही सकता कि वह तुम्हारे मित्रो की बैठक मे आवे।"

"नही, बिल्कुल नही, मुझे इसमे आपत्ति है, और इससे उनके लिए तो और भी ज्यादा विपत्ति हो सकती है।"

"पहेलियाँ न बुझाओ। विपत्ति और ज्यादा विपत्ति की परिभाषा बतलाओ ?"

"मान लो वह क्रोध मे आकर मायके चली जाये, तो यह ज्यादा विपत्ति है, और यदि वह कुछ समझकर फुफकारती हुई घर लौट आवे तो इसे मै विपत्ति मानता हूँ।"

"जाने दो इस प्रसग को, मुझे ऐसा मालूम देता है कि तुम लोगो के इस मनमुटाव मे और भी कई गहरी गाँठे पड गयी है।"

"जरूर, जरूर, पर वे गाँठे कभी खुलेगी, ऐसा नही जान पडता। जब कभी मै देर से घर पहुँचता हूँ, तो मुहल्ले मे सन्नाटा रहता है। पता नही, किसकी सलाह से मेरी पत्नी ने मुझे सुधारने का यह उपाय निकाला है कि जीने के कोने मे चुडैल बनकर खडी हो जाती है। शादी के बाद से ही उन्हे पता लग गया था कि मै जरा भूत-प्रेत से डरता हूँ, पर यह आशा नही थी कि वह चुडैल बनकर सताएगी।"

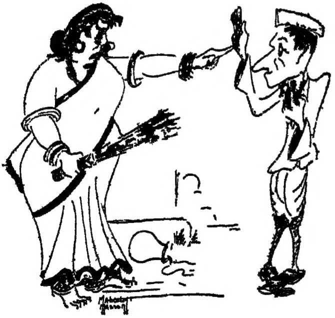

जैसे उस पर भवानी आयी हो.

"तो इसमे बात ही क्या थी ? चाहे चुडैल हो चाहे रखैल, पैर पकड लेते, बस सारे बखेडे मिट जाते।"

"कहते तो ठीक हो, पर वहाँ तो झगडा बदा था, करता तो क्या करता ? वह तो ऐसे दौडी जैसे उस पर भवानी आयी हो।

खखारकर बोली—जानता है मै कौन हूँ ? मै डायन बुढिया हूँ, और तेरी कोयलेवाली कोठरी मे रहती हूँ !"

"इस पर तुम्हे चाहिए था कि श्रीमती डायन को अपने सोने के कमरे मे बुला लेते ।"

"कहा नही कि ग्रह-दशा खराब थी ! मैने कह दिया—अच्छा तू डायन है ? मै भी कोई कम नही हूँ, क्योकि तेरा ही बहनोई हूँ !"

यह सुनकर मित्र के चेहरे की जो हालत हुई उसे न तो रोना कहा जा सकता है और न हँसना। अविवाहित मित्र ने कहा—"मेरे लिए भी दो बूँद आँसू बचा लेना।"

"क्यो, तुम्हारे लिए क्यो ? तुमने तो दिल्ली के लड्डू नही खाये। जब शादी होगी तब आटे-दाल का भाव पता लगेगा। अभी भले ही चौकडियाँ भरते रहो !"

"शादी ! उसके पहले ही सब ठडा पड जायगा !"

"क्यो ? अभी तो गरम बने रहो। फिर हर बात पर ठडा होना पडेगा ।"

मित्र बोले—"जानते हो, एक आधुनिक प्रेमिका ने मेरी क्या दुर्गति की है ?"

"सुनाओ, जल्दी सुनाओ, अभी तो गृहिणी को मनाना है ।"

"उस दिन मैने प्रपोज कर ही दिया। बात यह है कि उसके पिता की ओर से कुछ प्रोत्साहन-सा मिला था। मै श्रीमती की प्रतीक्षा मे ड्राइग रूम मे बैठा हुआ था। बगल वाले कमरे मे उसके माँ-बाप धीमे स्वर मे बाते कर रहे थे। उसकी माँ कह रही थी—अरुण के साथ मुन्नी की शादी का नतीजा अच्छा नही होगा, क्योकि अरुण बहुत धनी है । इस पर पिता ने हँसकर कहा—तो इससे क्या ? जहाँ तक मै मुन्नी को जानता हूँ, अरुण उससे शादी होने पर अधिक दिनो तक धनी नही रह सकता ।"

"अच्छा, यह बात है ! बिल्कुल शूर्पणखा है कि मानसगध मिली, और खून चूसने के लिए दौडी ?"

"नही नही, उसे मनुष्य की गध से कोई मतलब नही। उसे

तो रुपये की गध चाहिए, रुपये की। पर वह अधिक खर्च करने वाली प्रेमिका नही है। दो साल तक मैने उससे कोर्टशिप की, इतना तो मै समझता ही हूँ। उसके पिता अलबत्ता साहब है कि प्रतिवर्ष लडकी के जन्म-दिवस पर 'फिरपो रेस्टोरेट' से केक मँगवाते है। अबकी मैने देखा कि श्रीमती ने अपने जन्मदिन वाले केक से दो मोमबत्तियाँ गायब कर दी।"

"हूँ, बडी होशियार लडकी है! न खर्च और न आयु—दोनो मे से एक को भी बढने नही देती! तो तुम अब की बार गगाजी का नाम लेकर झूल जाओ!"

"झूल तो जाऊँ, पर कोई रस्सी भी तो नही। उस दिन मैने निराशा के साहस मे प्रपोज कर दिया। दो साल तक पैतरे बदल चुका हूँ। यह भी मालूम था कि मुझ पर उसकी स्नेह-दृष्टि है। मैने स्पोर्टिंग चान्स लिया।"

माला के अतिरिक्त न तो मेरा कोई सहारा है, न सामर्थ्य

"क्या हुआ, यह तो तुम्हारे चाँद-से मुखडे को देखकर अनुमान करना कठिन नही है!

"नही, तुम खाक भी नही समझे। दिल्ली के लड्डू खाना इतना आसान नही है। उस दिन मैने जाल कुछ-कुछ समेट लिया था। फिर उससे मैने कहा—'रानी, तुम सचमुच ही बहुत रईसाना तबियत की हो।' इस पर वह मधुर हँसी के साथ बोली—'रईसाना तबियत ही नही पूरी, रईस, क्योकि पिताजी कुछ नही देगे तो भी दस हजार तो दो ही देगे!' इस पर मैने उसकी आँखो मे आँखे डालकर कहा—'और मै तो सचमुच ही कहानी के उस चरवाहे बालक की तरह हूँ, जो राज-कन्या से शादी करने जाता है। माला के अतिरिक्त न तो

मेरा कोई सहारा है, न सामर्थ्य ।' इस पर श्रीमती ने मीठी मुस्कान के साथ एक कडी गायी—

'दूर देश का वह चरवाहा, मेरे बाट के वट की छाया ।'

सुनकर मुझे इतना उत्साह हुआ कि मैने विवाह का प्रस्ताव रख दिया, आँखे मुँद गई—बात यह है कि भावुकता तीव्र हो गयी । पर हाय री किस्मत !"

"हाय-हाय की क्या बात हो गयी ?"—मित्र ने आग्रह के साथ पूछा ।

नाटक के इस सीन पर सारे दर्शक जोश मे उतावले होकर रस्सी तुडाने लगे । सभी जानना चाहते थे कि इसके बाद क्या हुआ । सम्राट शाहजहा के ज्येष्ठ पुत्र युवराज दारा को जब जल्लाद खीचकर कारागार के किनारे पर ले जाते है, तब भी इतना जोश दिखाई नही देता ।

इतने मे नाटक फिर से शुरू हो गया । विवाहार्थी मित्र ने कहा—"ज्योही मैने सुना कि कोई आशा नही है, त्योही मैने सोचा कि मै दिखा दूँ कि मै भी ऐसा-वैसा नही हूँ । मैने तुरन्त कहा—'यह मै पहले से ही जानता था । इसलिए यह न समझो कि मुझे कोई कष्ट हुआ है ।'

सुनकर श्रीमती को आश्चर्य हुआ । बोली—'तो फिर प्रपोज क्यो किया था ? नॉटी कही का !' पर नॉटी सातवे आसमान पर पहुँच चुका था । पूर्णिमा के चाँद की तरह हँस कर मैने कहा—'ऐसा इसलिए किया था कि तुम्हारे दस हजार न मिलने का कैसा आघात लगता है, यह अनुभव करूँ । हा हा हा हा '

श्रीमती ने ओठ चबाकर कहा—'तो तुमने क्या अनुभव किया ?'

मैने अपना चन्द्रत्व कायम रखते हुए कहा—'यह सब दिल्ली के लड्डू है, जिसने खाये वह भी पछताया, और जिसने नही खाये वह भी पछताया' ।"

पर इस उपसहार को देखकर दर्शको मे से कोई भी नही पछताया । नाटक की मूल कहानी थी विवाह के पश्चात् पति-पत्नी का दाम्पत्य-जीवन—जिसका प्रारम्भ होता है इस मधुर आशा के आधार

पर कि यह जीवन सुखमय ही है । यहाँ दु ख का स्थान नही । इस कहानी मे थी गम्भीरता और थी करुणा । बहुत रगडे-झगडे के बाद पति-पत्नी मे मिलन तो हो गया । पर नाटक को और भी हँसी-खुशी के साथ समाप्त करने के लिए यह अन्तिम दृश्य जोडा गया था, जिसमे दो मित्र विवाह के विषय पर दार्शनिक आलोचना कर रहे थे । नीति-शास्त्र का वचन है—'मधुरेण समाप्तयेत्' ।

भीड छँट गई । चारो तरफ पुरुषो की आँखे कगालो की तरह स्त्रियो मे उसको ढूँढती फिरती थी । कई स्त्रियाँ कुण्ठित हुई, कई स्त्रियो ने साडी के आँचल को माथे पर थोडा और खीच लिया । सुरधुनि का हाथ भी कुछ ऊपर की ओर उठा था, पर उसने फौरन ही नीचा कर लिया । उसका चेहरा उसके व्यक्तित्व की रोशनी से जगमगा रहा था । अब वह सन्ध्या की सूर्यमुखी नही थी । एक तरफ उसकी सास तथा अन्य रिश्तेदार और दूसरी तरफ पुराने आचार-विचार, उसकी खुली हुई पखुडियो को मूँद नही सकते थे । विवाह के बाद से अब तक वह एक छोटी-सी अर्द्ध-विकसित कली थी, सहमी हुई, शर्माई हुई, अपने आप मे खोई हुई-सी । वह प्रद्युम्न के निकट आधी कल्पना और आधी मानवी थी । आज वह पूर्ण मानवी हो चुकी थी, अपनी मोह-निद्रा से जग चुकी थी ।

२

आज-कल याने इनकलाब के जमाने मे मनुष्य जन्म लेते ही रामायण के महिरावण का बेटा अहिरावण हो जाता है। इसलिए नव-विवाहिता वधू भी सध्या समय की मुँदने वाली कमलिनी होकर क्यो रहेगी ?

मोक्षदासुन्दरी अपनी समझ मे बहुत सोच-विचारकर बहू लायी थी। वे कलकत्ते के एक मुहल्ले मे उस वश की मालकिन है, जहाँ बाहर के कमरो पर आधुनिकता का हमला बहुत दिनो से हो चुका है। यहाँ तक कि भीतर के कमरो मे भी कभी-कभी दबे-दबे, चुपके-चुपके वह आती-जाती है। पर मोक्षदासुन्दरी और उनकी प्राचीन सखियाँ बडे साहस के साथ शताब्दी के इस आक्रमण को रोकती चली आ रही थी। बगाल की प्राचीन रीति के अनुसार ये सखियाँ आपस मे एक दूसरे को गगाजल, बेला का फूल आदि कहकर पुकारती थी। ऐसे प्रत्येक नाम के साथ कुछ जटिल अनुष्ठान भी होते थे। आज की लडकियाँ इन नामो को सुनकर भले ही हँसे, पर उस जमाने मे उन बेचारियो के पिता-माता द्वारा दिये हुए नाम अति अद्भुत होते थे, इसलिए गगाजल आदि नाम उन्हे अच्छे मालूम होते थे।

खैर, छोडिये इस बात को।

मोक्षदासुन्दरी के मन पर भी कभी-कभी आधुनिकता की चोट होती थी। आधुनिक हल्के-फुल्के उपन्यास बम की तरह है। उनका घर मे प्रवेश हुआ कि बस विस्फोट हुआ समझो, और उसकी ध्वनि आग की चिनगारियो की तरह फैलने लगी। घर के कम-उम्र लोग बराबर लाइब्रेरी से नई-नई किताबे लाते है। पहले बहुत हुआ तो जासूसी किताबे आती थी। अब भी वे आती है, पर नये ढग की। नाम आजकल इस प्रकार के होते है—'कालिज की बस मे', 'झील की लहर', 'हे अनामिका मित्र' इत्यादि।

मुहल्ले का पुस्तकालय केवल एक घर के लिए नही बना था, इसलिए मुहल्ले वाले जो पुस्तक पढते थे, उनका प्रवेश इस घर मे भी बीच-बीच मे हो जाया करता था। मोक्षदासुन्दरी भी जब-तब दुपहर के समय ऊँघती हुई किसी पुस्तक के पन्ने उलट लेती थी। दो-चार पृष्ठ पढते ही उसके माथे पर सिकुडन आ जाती थी, मानो कुनैन मिक्स्चर का एक घूँट पी लिया हो। नाराजगी मे वह किताब को एक तरफ फेक देती थी।

किताब को हटाकर वह तम्बाकू के साथ पान का एक बीडा चबाती थी। फिर सोचती, देख तो लें कि अन्त तक होता क्या है? लेखक कहाँ तक बेहयाई करेगा? छापे के हरोफ मे है, आखिर कहाँ तक खराब होगी!

फिर से पुस्तक खोलते समय मोक्षदासुन्दरी ने चारो तरफ जरा अच्छी तरह देख लिया। जिल्द बडी सुन्दर चमकीली है, उस पर पालिश वाली तस्वीर है, तिस पर पतले सिलोफन कागज मे मुडी हुई है। शायद यह इसलिए है कि दुकान मे लोगो की दृष्टि उस पर पडे। उसे वह दिन याद आया जब गगा-स्नान को जाती हुई अपनी एक सहेली से, जिसे वह टगरफूल कहती थी, भेट हुई थी। उसने एक बार अपनी सहेली से कहा था कि सोमवती अमावस्या के पर्व पर अपनी पुत्र-वधू (वधू कहना ही यथेष्ट था, पर पुत्र-वधू न कहा जाय तो 'सर्वाधिकार सुरक्षित' वाली बात कैसे जाहिर हो) को गगा नहाने भेजना उचित नही था, क्योकि वह बहुत खाँस रही थी। इस पर टगरफूल सहेली ने आश्चर्य दिखाते हुए कहा था—"देखा उस चुडैल को। उसी दिन मैने उसके कानों मे दो नये झूमके पहनाए थे, और वह खाँस-खाँसकर उन झूमकों को हिलाती थी जिससे उन पर सबकी नजरे टिक जायँ। आजकल की लडकियो में शरम या हया नाम की कोई वस्तु है ही नही!"

हाय! कौशल्या कम्पनी को क्या पता था कि महादेव जी का ध्यान भग करने के लिए और उनकी दृष्टि मे पडने के लिए उमा को कितनी साधना करनी पडी थी! और यह तो महज खाँसी तक

ही सीमित था !

जब तपस्या और साधना की बात आ गयी, तो यह भी कहना पडेगा कि नौकरी के लिए आजकल लडको को जो साधना करनी पडती है वही उमा की तपस्या है। महादेव के बदले महाबाबू या बडे बाबू की साधना करनी पडती है। ज्योही महाबाबू समझते है कि कोई नौकरी का प्रार्थी आया है त्योही उनकी आँखे फाइल मे जम जाती है। ध्यान भग होता ही नही। खैर, छोडिये उस बात को।

आजकल की उमा की तपस्या

पुस्तक खोलकर मोक्षदा ने फिर पढना शुरू किया। पूरी पुस्तक खराब थोडे ही होगी ! कही-कही अच्छी बाते भी मालूम होती है। इसलिए अपने तीन मन भारी शरीर से करवट बदलकर शीतलपाटी पर शान्तिपुर के करघे की महीन साडी से शरीर-रक्षा करते हुए मोक्षदासुन्दरी ने पढाई शुरू की। अन्यमनस्क-सी अवस्था मे ही पान का एक बीडा मुँह मे चला गया।

सध्या-समय डाक्टर साहब आने वाले है। यद्यपि वह डाक्टर को पसन्द नही करती फिर भी डाक्टर बुलाना पसन्द करती है। दिन भर तो पर-चर्चा मे कटता है, कभी-कभी आत्म-चर्चा भी करनी चाहिए। जब गुरू जी ने कान फूँका था, तो कहा था कि कुछ समय निकालकर आत्मा की चर्चा किया करो। इसलिए प्रतिदिन सम्भव न होने पर भी, सप्ताह मे एक या दो दिन डाक्टर साहब को बुलवाकर इस बात की परीक्षा करवाती थी कि आत्मा शरीर-रूपी पिजडे मे ठीक से है या नही। कही वह दगा तो नही देगी।

मोक्षदासुन्दरी को हृदय-रोग है और साथ ही खट्टी डकार की बीमारी। दोनो बहुत पुरानी है। पर डाक्टर ऐसा होना चाहिए जो रोगी को खुश रखे। ऐसा डाक्टर किस काम का जो यह कहे

कि दोपहर का सोना हाजमे को खराब करता है। ऐसे डाक्टर की तो बस झाड़ू से ही खबर लेनी चाहिए, जो यह कहे कि सध्या समय मील दो मील पैदल चलिये, तभी खट्टी डकार दूर होगी। जब पैदल ही चलना है तो डाक्टर किस मर्ज की दवा है? फिर कहता क्या है कि पैदल चलने से हृदय-रोग भी अच्छा हो जायगा। छी छी इतना पढ-लिखकर भी क्या डाक्टर ने यही डाक्टरी सीखी!

मुहल्ले की सहेली कौशल्या भी इस पर हामी भरती है। बात यह है कि बडो की बात मे हामी भरनी ही चाहिए। जो बडो से दोस्ती करना चाहे और खुशामद न करे, तो फिर निभाव होना मुश्किल ही समझिये। इसमे सन्देह नही कि कौशल्या यदि राजनीति मे प्रवेश कर पाती तो बहुत सफल रहती। इसलिए कौशल्या ने फौरन कहा—"अगर ननी डाक्टर है तो मै भी मुख्तार हूँ!"

ननी डाक्टर यदि यह सुनता तो अवश्य कहता कि कौशल्या बैरिस्टर बनने के योग्य है।

मोक्षदा सहारा पाकर बोली—"कहता क्या है कि रोग अच्छा करना है तो दिन का सोना और रात की पूडियाँ खाना छोडना पडेगा। यदि सात पुरखो से चली आयी पूडी और दिन भर नौकरो-चाकरो से झिक-झिक करने के बाद दोपहर का विश्राम छोडना पडे तो फिर डाक्टर ही क्यो बुलाती? इसीलिए तो डाक्टर है!"

कौशल्या ने छौक-सा लगाते हुए कहा—"ये कल के लौडे दूसरो का कष्ट क्या जाने! 'जाके पाँव न परी बिवायी, सो क्या जाने पीर परायी।' देखने मे तो बिल्कुल सारगी की तरह है, तिस पर चढा लिया सूट! अपना बैग भी हाथ से उठाते नही बनता! अजीब विलायती ढग है! न मालूम कहाँ से "

मोक्षदासुन्दरी इसी ननी डाक्टर को हफ्ते मे दो बार बुलाती थी, इसलिए उसे बिल्कुल भोदू साबित करना अपनी ही शान के खिलाफ था। शायद इस बात को समझकर मोक्षदासुन्दरी ने बात का रुख दूसरी तरफ मोड दिया। बोली—"डाक्टर तो कोई बहुत बडा नही है, पर सुना है कि उसके पास बहुत से यत्र है। उनमे एक यत्र ऐसा

मी है जिससे शरीर के भीतर का सब कुछ दिखायी देता है ।

कौशल्या ने भी तोपखाने का मुँह मोड दिया । बोली—"तुम बेल्कुल ठीक कह रही हो । उसने शादी भी शायद उसी यत्र की बदौलत की थी । जिसे ब्याह कर लाया है उसमे मेरे चर्म-चक्षु से न तो कोई रूप दिखायी देती है और न कोई गुण, पर सम्भव है कि एक्सरे यत्र से किसी गुण का पता पा गया हो ! हम लोग पढी न लिखी, हम तो बस आँखो से जो दीख जाय उसी को सत्य मानती है !"

पर कौशल्या की दृष्टि दिव्य दृष्टि थी । उसी दृष्टि से उसने समझ लिया था कि मोक्षदासुन्दरी की खुशामद भले ही की जाय, उसे शाति से नही रहने देना चाहिए । इसी कारण वह मोक्षदा के ज्ञान-नेत्र खोल देने के लिए आयी थी ।

पति रामप्रसाद इस समय घर पर नही थे । और रहते तब भी इस किस्से से उनका कुछ वास्ता नही पडता । उनकी पहुँच सिर्फ बैठक तक ही थी । अन्त पुर मे स्त्रियो का राज्य था । विलायती ढग से कहा जाता है कि स्त्री 'बेटर हाफ' या उत्कृष्टतर अर्द्धाश होती है । पर हमारे देशी समाज मे स्त्री प्रबलतर अर्द्धाश है । न माने तो विवाहित मित्रो से पूछकर देख लीजिये ।

रामप्रसाद की जवानी के जमाने मे उनके मित्रो ने स्त्रियो की मुक्ति के लिए कलकत्ता की पत्रिकाओ से लेकर इगलैड की टेम्स नदी के तट पर स्थित दैनिक 'टाइम्स' तक मे भयकर आन्दोलन चलाया था । तब ज्ञानवृक्ष के फल चखकर भुक्तभोगी बने हुए राम-प्रसाद ने गुप्त रूप से उन्हे परामर्श दिया था—"भाई, यह आन्दोलन बन्द करो । तुमको अभी कन्याओ के बल का पता नही । एक बार शादी कर लो तो मालूम हो जायेगा कि किसकी मुक्ति के लिए जोरआजमाई करनी पडेगी ।"

मित्रो ने उस समय उसकी बातो पर विश्वास नही किया था । कारण यह था कि वे सबके सब प्रेम के शिकार हो गये थे । पर जिनके प्रेम मे वे घुल रहे थे वे सबकी सब जँगलो के सीखचो के उस पार थी । उस जमाने के प्रेमियो की किस्मत में अपनी

प्रेमिकाओ के रिक्शो की टक्कर से घायल होना ही बदा था।

उस जमाने मे बालीगज की झील नही थी। होदी की झील तो थी, पर उसके किनारे तरुण-तरुणियो को एक साथ घूमने की स्वतन्त्रता

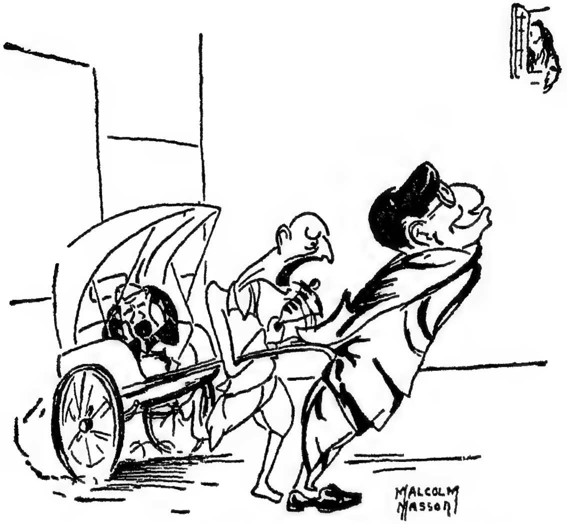

प्रेम में पड़कर रिक्शे की टक्कर भी खानी पड़ती है.

नही थी। इस पार से लडकियो का बेथून कालिज और उस पार से लडको का स्काटिश चर्च कालिज एक दूसरे को चुपचाप घूरते रहते थे। इस प्रकार घूरते-घूरते ही प्रेम के सम्बन्ध मे लोगो की दृष्टि पैनी हो गई थी।

कौशल्या ने कॉण्टिनेण्टल साहित्य का अध्ययन नहीं किया था, पर उसका मन कॉण्टिनेण्टल ढाचे मे ढला हुआ था। उसने सिर हिलाकर और नथुने फुलाकर सुरती चबाते-चबाते मोक्षदा को एक बहुत बडी खबर दी। बोली—"जानती हो बहन, तुम्हारा लडका तो लाखो मे एक है, पर वह ईसाइयो के जिस कालिज मे पढता है वहाँ लड़के और लडकियाँ साथ-साथ उठते-बैठते है। अब तो बीच में

झील भी नही रही। एक ही कमरे मे एक साथ पढते है!" कह कर उसने देखा कि क्या असर हुआ।

मोक्षदा को यह खबर पहले से मालूम थी। घर के भीतर की सारी खबरे उसे मालूम रहती थी, साथ ही बाहर की भी बहुत सी बाते उसे मालूम थी। मोक्षदा को यह सब आधुनिक रगढग पसन्द नही था। पर उसे विश्वास था कि जब तक हृदय-रोग और अम्ल-रोग की बीमारी है तब तक घर का इलाका सुरक्षित है। जब लडके को गोरो के कालिज मे भेजा गया है तो वह ठीक ही रहेगा। स्वदेशी वाले गोरो को गालियाँ तो बहुत देते थे पर अग्रेजी कम्पनी के एजेन्ट की स्त्री मोक्षदा को गोरो मे कोई बुराई नही मालूम पडती थी।

उनको तो वाइफ कहना च.हिए.

वह बोली—"गोरो का कालिज है। गोरो की धाक है जिससे शेर और बकरी एक ही घाट पानी पीते है! तो फिर लडके और लडकियाँ एक साथ पढेगी तो इसमे हर्ज ही क्या है? यह तो मामूली बात है।"

कौशल्या फूफी बडी चतुर थी। उसने फौरन अपना स्वर धीमा कर लिया। स्त्रियो को जब कुछ माँगना होता है तो वे गले की आवाज धीमी कर लेती है। पर ज्योही उन्हे मालूम होता है कि वार खाली गया त्योही उनका स्वर पचम पर पहुँच जाता है। कौशल्या ने फुसफुसाकर कहा—"तुम नही समझ रही हो। विद्या और सुन्दर दो प्रेमिका और प्रेमी थे। उन्होने मालिन की सहायता से प्रेमसूत्र जोडा था। अब विद्याऔर सुन्दर को मालिन मौसी की सहायता नही लेनी पड़ेगी।

अब बाग के माली की सहायता के बिना ही चिट्ठी-चपाती चलती रहेगी। और चिट्ठी की भी क्या जरूरत, जब कन्हैया और राधा दोनो के सैर-सपाटे के लिए बालीगज मे झील बन गयी है। वही है अब इनकी यमुना। सध्या समय लोग जिनके साथ वहाँ जाते है उनको 'स्त्री' कहने से उनकी मर्यादा की हानि होती है—उनको तो 'वाइफ' कहना चाहिए।"

मोक्षदा कुछ अविश्वास के साथ बोली—"पर वहाँ तो लोग आते-जाते होगे। फिर छेडखानी और मसखरेपन का मौका कहाँ लगता होगा ?"

गाल पर हाथ लगाकर कौशल्या ने ऊँची आवाज से कहा—"आजकल के लडको मे शर्म-हया कहाँ है ? अब लोग ग्रहण आदि के समय दान-पुण्य कहाँ करते है ? वे तो बस हर समय गुलछर्रे ही उडाते रहते है।"

कौशल्या आयी तो थी मोक्षदा को चिन्ता मे डालने, पर जब उसने देखा कि मोक्षदा ने उसकी बात पर ध्यान नही दिया तब वह स्वय ही चिन्ता मे पड गयी। जब वह समझ गयी कि उसका किया-कराया पानी हो गया, तब वह चिन्तित हो उठने की तैयारी करने लगी। धनी पडोसी को नाराज भी नही किया जा सकता। हर समय कुछ न कुछ काम निकलता रहता है। पर यह भी तो नही देखा जाता कि मोक्षदा निश्चिन्त होकर बैठी रहे। इसलिए उठने के पहले कौशल्या ने अन्तिम वाण मारा—"सुना है कि मुन्नू के साथ जिसका सबसे अधिक उठना-बैठना है उस लडकी का नाम है नीहारिका। जब बात मेरे कानो तक आ ही गयी तो मैने अपना धर्म समझा कि तुम्हे बता दूँ। विशेषकर जब तुम मुन्नू की शादी कर नई दुल्हन घर ला रही हो।"

थोडी देर रुककर कौशल्या वापस जाने लगी। जाते समय खाँस-कर मोक्षदा की ओर देखती हुई बोली—"जैसी ईश्वर की मर्जी। फिर भी मैने सोचा कि तुम्हे यह बात जरूर बतलानी चाहिए।"

३

शादी का अर्थ है एक तरह का भडोल। पेशेवर शादी कराने वालो की पॉचो उँगलियॉ घी मे रहती है। इधर भी खाओ, उधर भी खाओ, फिर नकद रुपये लो सो अलग। यह तो शादी कराने वाले की दृष्टि से हुआ।

रिश्तेदारो के लिए शादी का अर्थ है तरह-तरह की बाते बनाना, खाना-पीना, फेकना और मौके-बे-मौके ऐसी बात जड देना कि हुई-हुआई शादी बिगड जाय।

पडोसियो के निकट शादी का अर्थ है तीन दिन तक लाउड-स्पीकर से कान के कीडे निकलवाना और एक जून खाना खा लेना।

इसके अलावा दूल्हे के मित्र भी कम महत्त्वपूर्ण नही है। पडितो का कहना है कि दुलहिन चाहती है कि दूल्हा रूपवान हो, उसकी मॉ चाहती है कि दूल्हा के पास बैक-बैलेन्स हो, उसका पिता चाहता है कि दामाद चरित्रवान हो, मित्रगण कुल की खबर चाहते है और बाकी सभी याने बिरादरी वाले मिष्टान्न चाहते है।

यह बात बिलकुल झूठी है, कम से कम इस युग मे।

प्रद्युम्न के मित्रो ने तो वधू के कुल की ओर ध्यान तक नही दिया। कुल की अगर चिन्ता थी तो वह पुरोहित को थी और वधू के रूप-गुणो का ख्याल था तो सास और श्वसुर को। प्रद्युम्न के दोस्तों की इस सम्बन्ध मे क्या धारणा हो, इसके निर्णय करने के लिए चट-पट एक सभा आयोजित की गयी। अग्रेज सभी मामलो मे सभा और सम्मेलन करते थे। फिर ये क्यो न करे ? मित्रमडली के लिए इस प्रकार सभा बुलाना कोई नयी बात नही थी। इन सभाओ मे बडे-बडे व्याख्यान होते थे और न मालूम कितने प्रश्न निपटाये जाते थे। प्रश्न भी ऐसे होते थे, जैसे सहपाठिनी कुमारी घटव्याल का व्यग्य-चित्र बनाया जाय या नही, जब बगला-साहित्य की कक्षा मे अध्यापक 'काव्य

मे उपेक्षिता' इस विषय पर व्याख्यान दे तब हाय-हाय की जाय या नही, छाती पीटी जाय या नही, केवल प्रतिशत ३० छात्र उपस्थित होने पर भी सब की हाजिरी बोली जाय या नही, इत्यादि। सभा जब-तब हो ही जाया करती थी, कभी कालिज के मैदान मे और कभी पेडो की छाया मे। जरूरी काम न होने पर भी मामूली बातो के लिए सभा बुलाई जाती थी। जैसे कि अगर प्रोफेसर ने बेदर्दी के साथ पढाना शुरू कर दिया या जब वह प्रश्न पूछना शुरू कर दे।

फिर आज तो एक अत्यन्त आवश्यक कार्य पड गया था सहपाठी के विवाह का। पर किसी ने प्रद्युम्न की राय जानने की जरूरत ही नही समझी, न घर मे माँ ने और न बाहर दोस्तो ने ही। विवाह तो विवाह ही ठहरा, भला उसमे राय की जरूरत! जो मित्र राजनीति मे पटु थे, इस सभा मे उनका स्वर ही ऊँचा था।

शून्य की तरफ घूँसा दिखाकर सभापति ने कहा—"गोरो को न सही, गोरो के पास उठने-बैठने वाले लोगो को मारने का हमने जो कार्यक्रम बनाया है वह इस शादी से खटाई मे पड जायगा। प्रद्युम्न को इस समय हाथ-खर्च के रूप मे जो कुछ मिलता है और जिससे हमारी चाय और चाट चलती है, क्या आगे भी चलेगी? वह नही चलेगी।"

एक मित्र ने प्रद्युम्न से पूछ डाला—"प्रद्युम्न, सच सच बताना कि जब कलकत्ता टीम और मोहनबागान टीम मे मैच होता है तब क्या तुमने कभी गोरो के मुँह के सामने तालियाँ बजाई है? कभी नही। नेवर नेवर"

एक अन्य मित्र ने चोट करते हुए कहा—"सारे देश के उद्धार के बदले केवल एक लडकी के उद्धार से बढकर भला वीरत्व क्या होगा? न मालूम कब से तुम से कहा जा रहा है कि सवेरे योगाभ्यास और शाम को कसरत किया करो। वह तो सब चूल्हे मे गया, और करने चले शादी! आशा है कि प्रेमाभ्यास का प्राणायाम ठीक तरह करोगे।"

राजीव भी राजनीति के पथ का पथिक था। उसने भी अपनो

तान छेडी, बोला--"तुम्हे तो किसी दिन हमने नही देखा। नेता, उपनेता, उदीयमान नेता आदि महारथियो को जनता के जूए से बाँध कर काम करने और सभा-सोसाइटी मे कुर्सी-मेज लगाने मे तुम कभी

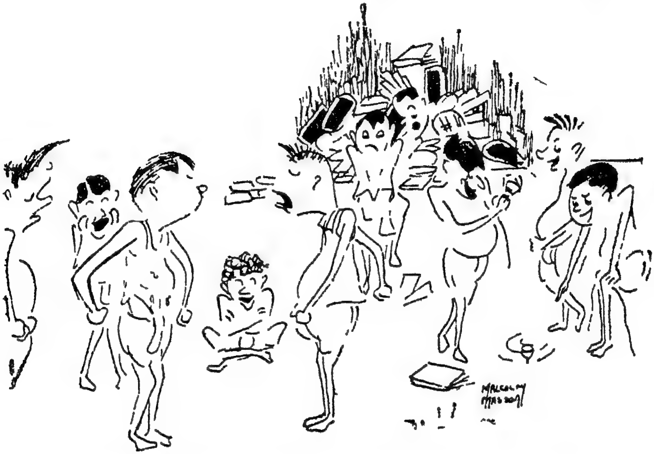

सवेरे को योगाभ्यास और शाम को कसरत किया करो

काम नही आये। तुमको रिजर्व लिस्ट मे रक्खा था। वहाँ से भी आज से ही तुम्हारा नाम खारिज होता है। जो जाडे से घबराता है और जो डर से घबराता है, वे दोनो ही बराबर है।"

सब लोग हँस पडे, यद्यपि वे यह नही समझ सके कि अन्तिम वाक्य का क्या अर्थ है। उन लोगो ने जानना चाहा कि इसका क्या अर्थ है।

राजीव अपनी कमीज के कॉलर को अच्छी तरह उलटते हुए, मानो सर्दी से बचना चाहता हो, बोला—"परके साल बहुत सर्दी पड़ी थी। फिर भी प्रद्युम्न अपने हरे रग का शाल नही ओढता था। माँ के डर से घर से निकलते समय तो ओढता था पर कालिज में उतार-कर रख देता था। एक दिन फिर मै बोला–'क्यो भइ,सर्दी नही लगती? केवल कमीज से ही इस साल काम निकाल रहे हो।' प्रद्युम्न ने

गम्भीरता के साथ पुस्तको से चिपटते हुए कहा—'सर्दी की बात मामूली है, मगर जब कभी याद आती है कि परीक्षा पास ही है तो शरीर पसीने से तर हो जाता है' ।"

राजीव ने फिर उसी का हवाला देकर कहा—"अब तो तुम्हे कमीज की भी जरूरत नही पडेगी। शरीर यो ही गरम रहा करेगा। पर देखना, कही इतनी अधिक गर्मी न हो कि पिघलकर बह जाओ। बात यह है कि एक से दो होने जा रहे हो, तो गर्मी भी दुगुनी होगी । पर जब श्रीमती जी मायके चली जायेगी तो फिर ताजिया ठडा हो जायगा । कुछ भी हो अब तुम बेकार हो गये ।"

साथियो मे केशव नाम का भी एक लडका था। उसने तय कर लिया था कि विद्यार्थी-जीवन मे विद्या जरूरी नही है, इसलिए वह दूसरो की विपत्ति मे काम आने के लिए व्याकुल था। पर कहने वाले इस विपदबान्धव-समिति के बारे मे बहुत कुछ कहा करते थे । सस्कृत के पडित जी ने अपने चश्मे को नाक से करीब-करीब उतारकर कहा था—"विपदबान्धव शब्द मे तत्पुरुष समास ही नही है, बल्कि बहुब्रीहि समास भी है ।"

लडके यह सुनकर आँखे फाडे रह गये थे। बात यह थी कि पडित जी जब रहस्यपूर्ण मुद्रा मे बोलते थे तब पता नही चलता था कि वह मजाक कर रहे है या नाराज हो रहे है ।

पडित जी ने नाक से चश्मे को जरा और नीचे खिसकाया तो चश्मा गिरने से बच गया । फिर आँखो से ब्रह्मतेज फैलाते-फैलाते कहा—"विपदबान्धव-समिति ऐसे लोगो की नही है जो विपत्ति मे काम आते है, बल्कि ऐसे लोगो की है जो विपत्ति के ही मित्र है याने विपत्ति लाते है। मतलब यह है कि लोगो के चन्दे से चाय-कटलेट का खर्च निकल आये, इसी का यह बन्दोबस्त है । सिनेमा, फुटबॉल इत्यादि का खर्च भी इसी प्रकार निकल आता होगा। अब तुम लोगो को समास समझने मे मुश्किल नही होगी ।"

जब क्लास खत्म हुई तो लोगो ने केशव से पूछा कि आखिर पडित जी यह क्या कह रहे थे। तब केशव ने कहा—"बात यो है

कि हमारा एक सदस्य पडित जी को पहिचानता नही था, वह आफत का मारा उनके घर चन्दा माँगने पहुँच गया। पडित जी उसी की खार खाये बैठे थे, सो आज उन्होने उसी की कसर निकाली।"

यह तो पुरानी बात है। केशव अब तक सभा मे चुपचाप बैठा था। वह एकाएक सीग उठा और ताल ठोककर मैदान मे आ गया। बोला—"प्रद्युम्न, तुम घबडाओ मत। तुम मजे से शादी करो। मेरी विपदबान्धव-समिति तुम्हारे पीछे-पीछे है। खाना परोसने से लेकर दुल्हन की सहेलियो से चोच लडाने तक के सारे काम हम लोग निपटा लेगे। यहाँ तक कि चक्रव्यूह भेदकर उत्तरा को अभिमन्यु के घर तक पहुँचाने का ठेका हमारा रहा। तुम कतई न घबडाओ।"

समिति के दूसरे उत्साही सदस्य भी सामने आ गये। उन्होने जेब से दाल-मोठ निकालकर सब को जगन्नाथ जी के प्रसाद की तरह दो-दो दाने देते हुए कहा—"किसी कोमल हस्त के स्पर्श के बिना ज़िन्दगी ऊसर हुई जा रही है। अपना भला न हो तो कम से कम पडोसी का ही भला हो।"

सभा यहीं पर समाप्त नही हुई। लोगो ने कविवर नीहार से कहा कि तुम भी कुछ कहो। यह इनकलाब का युग था, इसलिए 'मोनार्की' (एकछत्र राज्य) तो चल नही सकती थी। लीडरो का भी बिस्तरा गोल-सा ही था। सब अपने आपको चलाने मे विश्वास करते थे। इसलिए चालक या परिचालक, नायक या अधिनायक की जरूरत नही थी। इस युग मे विक्रमादित्य या अकबर के बिना ही नवरत्न हर गली-कूचे मे फिरते रहते थे। उनकी कोई कमी नही थी।

सब ने नीहार से कहा—"कविवर, तुम भी कुछ कह डालो। मौका भी है, और दस्तूर भी है।"

'कवि' शब्द सुनते ही लोगो की आँखो के सामने एक चित्र खिच जाता है। लम्बे-लम्बे बाल, ढीला कुर्ता और जमीन को छूती हुई धोती की काछ। उम्र चाहे कुछ भी हो, क्योकि सिनेमा की तारिकाओ की तरह कवियो की उम्र बढती नही है। और कविता करना तो बगाली मात्र का जन्मसिद्ध अधिकार है।

नीहार ऐसा ही कवि था। इसके लिए किसी प्रकार के प्रमाण की आवश्यकता न थी। वे बोले—"आज के शुभ दिन की यही वाणी है कि प्रद्युम्न ही क्यो, सभी लोग शादियाँ करे।"

कविता करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है

इस पर एक ने कहा—"कवि, यह तुम क्या कह रहे हो ? अभी तो हमने प्रेम भी नही किया और तुम कहते हो कि शादी कर लो ! यह नही मालूम था कि तुम इतने बेदर्द निकलोगे, कुछ तो रहम करो।"

कविवर बोले,—"तुम्हारे लिए मेरे दिल मे इतनी सहानुभूति है कि कह नही सकता। विद्या की चर्चा तो कर ही रहे हो, फिर शादी से क्यो घबराते हो ? दोनो मे फर्क ही क्या है ?"

वही साहब बोले—"यह तुमने अच्छी कही। दोनो की साधना कठिन है—यह मै मानता हूँ। फिर भी क्या दोनो मे कोई फर्क नही है ?"

"फर्क भले ही हो, दोनो मे एक ही वस्तु की आवश्यकता पडती है। जितना दान करोगे, उतना ही अधिक लाभ होगा। एक लगाओ चार पाओ।"

वही साहब फिर बोले—"तब तो यह बडे मुनाफे का काम है। यह तो चोरबाजार से भी अच्छा है।"

कवि ने कहा—"बिल्कुल सही। चोरबाजार तो इसके सामने कुछ भी नही है। यह तो उससे भी बढकर है। यह जुआ है। रातोरात बन जाओ और रातोरात बिगड जाओ। गदा से शाह और शाह से गदा। यह कायर के लिए नही है।"

मित्रो ने चिल्लाकर कहा—"धन्य है ! धन्य है ! इसके बाद शादी

के अलावा कोई कर्तव्य ही नही रह जाता। कविता लिखने की तरह प्रेम या विवाह करना भी प्रत्येक युवक का अधिकार हो जाता है।

प्रेम करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है

कम से कम प्रेम करने का अधिकार तो होना ही चाहिए। और यह भी वह अधिकार जिसे फडामेटल राइट (मौलिक अधिकार) कहते है।"

लम्बी साँस छोडकर जगबन्धु ने कहा—"अवश्य !"

उसके मन की गुप्त व्यथा की बात सब लोग जानते थे। उसके माता-पिता ने गाँव मे उसके लिए एक शादी तय की थी। वह नीम-राजी तो था, पर दुखी इस कारण था कि उसकी पत्नी देहाती हो, यह उसे पसन्द नही था। उसके जीवन मे कोई विशेष उच्चाकाक्षा नही थी। न तो वह परीक्षा मे अव्वल आना चाहता था, न वह कोई छात्र-

नेता था, और न कोई कम्यूनिस्ट था, फिर भला शादी से वह क्यो कतराये ?

इस बीच मे कवि नीहार ने अपने चुटकुले शुरू कर दिये थे। बिल्कुल मामूली चुटकुले थे। अग्रेजो मे तो इनका बहुत प्रचलन है, क्योकि वे हँसना-हँसाना जानते है और चाहते भी है। क्योकि वे अँधेरे मे सीने पर पत्थर रखकर चुपचाप लेटे नही रहते।

नीहार ने सर्वज्ञ की तरह कहा—"सुनो, वे ऐसी हालत मे क्या करते है ! अग्रेज लडकियाँ बडी चालाक होती है। कोई झाँसे मे डालकर उनसे शादी कर ले, ऐसा नही हो सकता। बडी जाँच-पडताल और जान-पहिचान के बाद शादी होती है। पर शादी के पहले और बाद को उन्हे भी बडी-बडी आफत झेलनी पडती है।"

लोगो ने कहा—"कविवर, इस तरह पहेलियाँ न बुझाओ। जो बात असली है, वह बताओ।" यह कहकर लोग उसको ऐसे घेरकर बैठ गये मानो बडी देर के लिए तैयार होकर बैठे हो।

नीहार ने कहा—"तो सुनो। शास्त्रो मे जिसे उमा की तपस्या बताया गया है, वह अग्रेजो मे शिव की साधना के रूप मे होती है। लडकी मन ही मन यह आशा करती रहती है कि लडका विवाह का प्रस्ताव रक्खेगा। पर चालाक लडकी कभी यह बताती नही है कि वह इस प्रकार की कोई आशा कर रही है। यदि बुद्धू लडका कुछ कहने पर उतारू हो जाय और लडकी मन ही मन इससे खुश हो, तो भी वह दिखाती यही है कि उसे कुछ परवाह नही है।"

इस पर हरिहर ने चेहरा फुलाकर पूछा—"ऐसा करने का कारण क्या है ?

जगबन्धु ने कहा—"पहले सुन तो लो।"

कवि नीहार ने फिर कहना शुरू किया—"यह सब भानमती का खेल है। उस खेल मे एक अँगूठी पहनाई जाती है। हम लोगो के यहाँ जब विवाह पक्का किया जाता है तब लडकी को कोई गहना दिया जाता है, पर उनके यहाँ यह उपहार केवल अँगूठी के रूप मे होता है। यदि अँगूठी से ही काम चल जाय तो गहनो की क्या आवश्यकता ?"

राजनीतिक राजीव के मुँह पर सन्देह की घटा घिर आयी। उन्होने पूछा—"अँगूठी से काम चल जाता है ?"

नीहार ने कहा—जरूर। उनके यहाँ पूर्व रग इस प्रकार होता है कि मान, अभिमान और मान-भजन सब उसी अँगूठी पर हो जाता है। नाराज होकर श्रीमती कहती है—'अच्छा, तुम ऐसे आदमी हो ! जाओ तुम्हारे मुकाबले मुझ मे कोई कमजोरी नही है। तुम अपना रास्ता चुन सकते हो !'

'अच्छा, यह बात है ? लाओ मेरी हीरे की अँगूठी !'

इस पर श्रीमती कहती है—'नही, मेरी राय तुम्हारे सम्बन्ध मे

बदल सकती है, पर अँगूठी के सम्बन्ध मे नही !'

यह सुनकर मित्रमडली मे जोर का कहकहा लगा। नीहार ने पहले से अधिक उत्साह के साथ कहना शुरू किया—अभी अँगूठी-पर्व की और बाते तो सुनो ! मान लो कि मगेतर के साथ फिर एक दिन झगडा हुआ। अभी इगेजमैट हुए थोडे ही दिन हुए थे, पर बातचीत बहुत लम्बी हो गयी। बात का बतगड बन गया। अन्त मे भावी वर ने ब्रह्मास्त्र छोडा—'जब यही बात है तो लाओ, मेरी अँगूठी वापस करो !'

इस पर मंगेतर वाक्य-वाण छोडती हुई कहती है—'वापस दूँ ? यह माँग कोई नयी नही है। तुम्हारा सुनार पहले ही आकर मुझसे अँगूठी वापस माँग चुका है !'

मित्रो ने कहा—"तो इसका अर्थ यह हुआ कि प्रेम उधार-खाते मे चल रहा था !"

नीहार ने हँसकर कहा—सिर्फ उधार थोडे ही। यह तो जानते ही हो कि प्रेम मे सब कुछ जायज है। बस, एक ही बात बतायी जाती है कि कही मँझधार मे ही किश्ती डूब न जाय। मित्र भावी दूल्हा से कहते है, 'यह इगेजमैट कब तक घसीटोगे ? इसको लटकाने मे कोई फायदा नही, बस तुम लटक जाओ। किस्मत मे जो होगा वह देखा जायगा।'

इस पर भावी दूल्हा साहब कहते है—'अरे भाई, इतनी जल्दी क्या है ? अभी शादी कर लूँ तो बताओ फिर साँझ कहाँ कटेगी ?'

मित्रमडली इस प्रश्न के अन्तर्निहित विचार को समझ गयी। वे समझ गये कि अनन्तकाल तक प्रेम मे ही भलाई है, विवाह मे नही।

पर उस भावी दुल्हा का प्रेम अधिक दिन तक नही चल सका। एक दिन फिर लडाई हुई और अब की बार उसका रूप कुछ भयकर हो गया। श्रीमती ने डाक-महसूल खर्च करके वी पी. से अँगूठी वापस भेज दी, और पैकेट पर बडे-बडे हरफो मे लिख दिया—'साव-धान ! इसमे काँच है !'

सब लोग हँस पडे।

नीहार बोला—"अभी ठहरो, बात अभी पूरी नही हुई। अन्त

तक जिसकी कोई उम्मीद नही थी वही बात हुई, यानी शादी तय हो गयी ।"

सावधान ! अँगूठी काँच की है.

जगबन्धु ने कहा—"समझ गया, फिर क्या हुआ ?"

नीहार बोला—"घबराओ नही, ध्यान से सुनो। शादी के लिए

किसी को विशेष निमत्रण नही दिया गया। शराब का खर्च और

भाग्यशालिनी तो श्रीमती जी की माता जी है.

केक का आकार कौन बढावे ? इसलिए शादी गुप्त रूप से हो गई। पर एक दिन राह चलते समय एक पुराने मित्र ने चुपके से पूछा, 'सुनता हूँ कि तुमने शादी कर ली है ? आखिर वह भाग्यवती कौन है ?

घूँट निगलकर कन्धा हिलाते हुए श्रीमान ने कहा—'श्रीमती जी की माता जी !'

नीहार बोला—समझे नही न ? शादी के बाद हनीमून भी समाप्त हो गया। एक दिन श्रीमान ने क्रोध मे आकर कहा—'अब समय आ गया है कि मै तुम्हारे दोषो को थोडा-थोडा बता दूँ। उसके बिना काम न चलेगा।'

इस पर श्रीमती ने निर्विकार होकर उत्तर दिया—'परेशान न होओ वाउण्डर हनी साहब ! ये सब मै जानती हूँ। यदि मुझ मे दोष न होते तो मै तुम्हारे ऐसे पिद्दी न पिद्दी के शोरबे को न चुनती !'

इस पर श्रीमान तैश मे आकर आगबबूला हो गये। घर से निकल पडे और रात के अन्तिम पहर मे लौटे।

चिडियो के परो की बनी हुई नरम रजाई के नीचे करवट लेते हुए श्रीमती बोली—'अच्छा तो लौट ही आये ? घर ही सबसे बड़ा ठिकाना निकला ! क्यो ?'

उसी प्रकार नाराजगी के लहजे मे श्रीमान ने उत्तर दिया—'और कहाँ जाता ? सारे रैस्टोरेंट बन्द हो गये थे। एक घर ही खुला हुआ है !'

अगले दिन धूप बहुत उज्ज्वल होकर निकली। पति महोदय ने मजे मे दाढी बनायी, बालो पर कघी फेरी और इसके बाद कलेन्डर की तरफ देखते हुए कहा—'आज विवाह हुए पच्चीस दिन हो गये। यदि पच्चीस साल हो जाते तो सिलवर जुबली मनायी जाती। अभी से मित्र लोग उसका स्वप्न देख रहे है।'

पत्नी महोदया इस पर सजग हो गयी। बोली—'बडी अच्छी ख़बर है। चलो, इसी पर एक मुर्गी हलाल की जाय।'

मुर्गी हलाल करने की बात सुनकर पति महोदय बोले—'जो बात पच्चीस दिन पहले हो चुकी है उसके लिए एक मुर्गी को सजा

क्यो दी जाय ?'

इस पर पत्नी महोदया सिसकने लगी। सिसकियाँ तो थी, पर आँसू नही थे। फिर भी कई बार रेशम के गाउन से मुँह पोछती रही। सिसकियाँ भरती हुई बोली—'जब तुम "इगेज्ड" थे, तब तुम मुझे इससे कही अधिक लाड-प्यार करते थे।'

'बात ठीक है, मेरी शिक्षा-दीक्षा ऐसी रही है कि मै विवाहिता स्त्रियों की ओर आँख उठाकर भी नही देखता। असली बात यह है।'

यह बात सुनकर श्रीमती आपे से बाहर हो गयी और कमरे से बाहर चली गयी। साथ-साथ श्रीमान जी भी निकल गये। अवश्य वे दूसरी तरफ ही गये, क्योकि उन्हे भय था कि कही पत्नी महोदया लौटकर न आ जायँ।

शादी करके लौटने के बाद पहली दावत हो रही थी, जिसे कही-कही बर्तन छूने की दावत भी कहते है। यह वह मौका होता है जब लोग नयी बहू के हाथ का भोजन खाते है। मित्रो का दल टिड्डी-दल की तरह टूट पडा था। विवाह मित्रो का नही था पर मजा दूसरो की ही शादी मे आता है। खूब खाओ-पियो, गुलछर्रे उडाओ और शोर मचाओ।

सब तरह के लोग आये थे, यहाँ तक कि एक वृद्ध सज्जन और उनके कम उम्र वाले साले साहब भी वहाँ उपस्थित थे। बहनोई साहब रौब दिखाने के लिए टैक्सी पर आये थे क्योकि यदि साले के साथ ट्राम मे आते तो वे मामूली समझे जाते। फिर भी मन मे दो रुपये टैक्सीवाले को देने का 'शौक' तो था ही। साले साहब ने मन्द मुस्कान के साथ कहा—"दो रुपये गाँठ से गये तो कोई बात नही, जो ठाठ ग्राप यहाँ देख जायँगे वह कभी न देखा होगा।"

बहनोई साहब ने आँखे तरेरी। बोले—"वाह, मैने क्या-क्या ठाठ देखे है, तुम्हे क्या मालूम ? मैने अपनी शादी मे भी टैक्सी मे दो ही रुपये खर्च किये थे।"

"याने ?"

अब इस याने का कोई उत्तर नही था, क्योकि इस बीच मे बहनोई साहब को शायद याद हो आया कि साले साहब के पीछे एक और साहब भी है, जिनसे निपटना टेढी खीर है। पर ससुर साहब की लडकी के भाई ने प्रसग इतनी आसानी से समाप्त नही होने दिया। बोले—"आपके कहने का शायद यह मतलब है कि दो रुपये की टैक्सी-खर्च के बाद आपको महादु ख का सामना करना पडा !"

बहनोई साहब घबराकर बोले—"महादु ख नही, महादर्शन हुआ। उस दर्शन से मेरा जीवन भर गया !"

उधर से दो साहबी ठाठ-बाट के व्यक्ति आपस मे तर्क करते हुए इधर आ निकले। एक ने अपने चश्मे को सम्हालते हुए कहा—"ओह गॉड, शादी ! मै इसके एक मील तक के दायरे मे भी नही जा सकता। 'नाट बाइ ए लॉग माइल'।"

पर उनके वक्तव्य से यह जाहिर नही हुआ कि जिस महिला से उनकी शादी होने की बात थी वह उनके पीछे दौड रही है या नही। दूसरे साहब बोले—"तो फिर तुम्हारी उस सलिला की कौन गति होगी ? 'माई गाल साल' कहते हुए बार लायब्रेरी मे तो तुम्हारे मुँह मे पानी भर आता था !"

बार लायब्रेरी की कुर्सी की शोभा बढाने वाले मित्र ने अपने पोशने चश्मे को यथास्थान रख दिया और पाइप को बूट के तने पर ठोकते हुए कहा—"मेरे प्यारे, तुम मुझे बधाइयाँ दो। बात यह है कि मै 'ब्लडी' अर्थ मे 'हैपियस्ट मैन' हूँ। बात ऐसी है कि परसो रात मैने सलिला का चालान कर दिया। समझे ? 'माइ गाल साल' की शादी मे मै ही 'बेस्ट मैन' बना था।"

"तुम्हारी सलिला की शादी हो गयी और तुम कहते हो कि तुम्हे बधाई दी जाय ?"

"हाँ बिरादर, हाँ, मै बहुत ही सुखी हूँ कि मुझे 'बेस्ट मैन' ही बनना पडा।"

शोरगुल मे आगे की बातचीत सुनायी नही पडी, पर इसमे सन्देह नही रहा कि साहब बहादुर अपनी 'नाल' को दूसरे के मत्थे मढकर बहुत सुखी हुए थे।

इसी बीच लोटन कबूतरो की तरह दो बिगडे-दिल नवयुवक घोडा-गाडी से उतरे। यह समझना कठिन नही था कि इनमे से एक तो किसी पुराने ठाठ के रईस के कुलप्रदीप है, और दूसरे उनके लगो-टिया यार।

दोनो परम उत्साह से यह खोज करने लगे कि दुलहिन किस तरफ बैठी हुई है। रईसजादे बोले—"दुलहिन के पिता ने मुझे पचास हजार देना किया था।"

अभी मित्र या मुसाहिब शायद नये थे । इस इतिहास से अपरिचित थे । बोले—"क्यो बात क्या है ? क्या कोई वकील तय कर दूँ ?"

रईसजादे ने गिडगिडाकर कहा—"सब तकदीर से होता है । पहले शादी की बातचीत मेरे साथ चल रही थी, अब शादी दूसरे के साथ हुई । पचास हजार का दहेज मारा गया ।"

गदाधर थोडी देर बाद आया था । इस कारण वह कुछ अकेला-अकेला अनुभव कर रहा था । लोग गिरोहो मे बँटकर बातचीत कर रहे थे । वह किसी गिरोह मे शामिल होने का प्रयत्न करने लगा । घूमते-फिरते वह लोगो की बातचीत सुन सकता था ।

एक गिरोह से आवाज आ रही थी—"बहुत अच्छी शादी हुई है । दुलहिन देखने-सुनने मे अच्छी है । कपडे-लत्ते, गहना-पत्ता है, इसके अलावा सभ्यता और श्री भी है । दूल्हे के लिए और क्या चाहिए ?"

इसके उत्तर मे किसी ने बहुत जल्दी से कहा—"तो दूल्हा और क्या माँग सकता है ? इसके बाद तो दुलहिन के माँगने की बारी आयेगी, और वह फिर कही रुकेगी नही ।"

एक आवाज आई—"क्यो साहब, आप भी तो शादीशुदा है, क्या आपका तजुर्बा यही है ?"

जिससे प्रश्न पूछा गया था उसने चेहरे को रुआँसा-सा करते हुए कहा—"क्या कहूँ साहब, कुछ कहते नही बनता । मैने न तो रूप के लिए शादी की, न रुपयो के लिए और न कुल के लिए । मैने तो एक स्त्री के साथ सहानुभूति के लिए शादी की थी ।"

किसी ने पिघलकर उत्तर दिया—"अच्छी बात है, अब आपको मेरी सहानुभूति मिलेगी ।"

इधर तो यह सब चल रहा था, उधर नई दुलहिन को देवी की तरह सजाकर बैठाया गया था । अभी वह अपने पति तक से बहुत दूर थी; पति के मित्रो की तो बात ही क्या है । पर शोरगुल तथा गाजे-बाजे के कारण किसी को इस परिस्थिति मे शिकायत के लायक कोई बात मालूम नही हो रही थी । फूलो और गहनो से लदी हुई देवी मे

मानवी कहाँ थी ?

प्रतिमा मे प्राण नही होता ।

मूर्ति मानवी नही होती ।

एक हजार बिजली की बत्तियो की मालाओ से सजाया हुआ कमरा फूल, चन्दन, शोभा और सौरभ मे स्वर्ग-सा लग रहा था । नई दुलहिन के चारो तरफ अमेरिकनो की मोटरो की तरह चम-चमाती हुई तरुणियाँ धाराप्रवाह बोलती जा रही थी । उनमे से जो कुछ अधिक उम्र की थी, वे बातो मे अधिक रस लेती हुई मालूम होती थी। कच्चे अमरूदो के मुकाबिले मे गदराये हुए अमरूद अधिक आकर्षक थे ।

कुछ अधेड स्त्रियाँ थी । तरुण और तरुणियो के बीच मे वे ठण्डे हिमपिड-जैसी थी । वे 'डग इन दि मान्जार' पॉलिसी अख्तियार कर रही थी । न तो उनकी आसक्ति तरुणो पर थी और न तरुणियो पर । फिर भी उनके मिलन मे ये बाधा डाल रही थी ।

अधेड स्त्रियाँ दूल्हे के मित्रो को ऐसी दृष्टि से देख रही थी, मानो वे बिना निमत्रण के चले आये हो । पर तरुणियाँ दूसरे ही ढग से सोच रही थी । वे सोच रही थी कि वे लोग सकुचित होकर दूर-दूर क्यो मँडरा रहे है ? वे आगे क्यो नही बढ आते ?

बात यह है कि अधेड स्त्रियो के सोचने का तरीका और है । वे सोचती है कि आग और घी को पास-पास नही रखना चाहिए । यद्यपि उन्होने विज्ञान नही पढा है फिर भी उन्हे यह पता है कि इन दोनो के पास रहने से गर्मी पैदा हो जाती है ।

पर तरुण अपने ही ढग से सोचते है । ट्राम मे, बस मे अक्सर इन दोनो पदार्थो को एकत्र होने का मौका मिलता रहता है, पर वहाँ गर्मी पैदा होने के बजाय ठडक पैदा होती है । बात यह है कि हर समय यह डर रहता है कि तरुणी थप्पड न मार दे । अवश्य इस मौके पर वह डर नही था । स्त्रियो ने अपने चेहरो को हँसी से उद्भासित कर रखा था । खुशी के कारण आज की रात सभी कुछ सुन्दर दीखता है । तरुणियो के मन मे यह आशा हो रही थी

कि शायद किसी की हँसी से उनमे से किसी तरुण के जीवन का अन्धकारमय कोना जगमगा जाय। आशा मे प्रकाश होता है और इस समय वही प्रकाश चारो ओर व्याप्त था।

मित्र लोग कमरे के सामने पिकेटिग कर रहे थे। डरिये मत, भय की कोई बात नही है। इसमे सुविधा भी है और सम्मान भी। यदि विश्वास न हो तो सत्याग्रह आन्दोलन के पृष्ठो को खोलकर देखिये। उनमे आपको दिखायी पडेगा कि स्वतन्त्र भारत के वीर सैनिक उछलकर बाहर आ रहे है।

बिस्तरे पर लेटकर पिकेटिग किये जाइये.

पर हम लोगो ने दूसरी तरह की पिकेटिग सीखी है। सोचकर देखिये कि जाडे के दिनो मे सवेरे उठना कितना कष्टकर है। ऐसे मौके पर बिस्तरे मे लिहाफ ओढे पडे रहना ही एकमात्र सत्य ज्ञात होता है। यदि आपकी आत्मा इस बात की गवाही देती है, तो

आप बिस्तरे पर लेटकर पिकेटिग किये जाइये। पत्नी महोदया चाहे जितनी नाराज होकर टुमक-टुमक कर बरस पडे, आप उन्हे पुलिस का प्रतीक समझकर तकिये से चिपककर ईश्वर का नाम लेने का बहाना कीजिये।

एक दूसरा उदाहरण लीजिये। गर्मियो की छुट्टी अभी दूर है, पर प्राण छुट्टी के लिए अकुला रहे है, और उधर अध्यापक महोदय इस बात पर तुले हुए है कि कोर्स खतम करके तभी दम लेगे। ऐसे समय मे आप कालिज की दीवार के पीछे वाले वट-वृक्ष के नीचे बैठकर चने-मुरमुरे चर्वण करते जाइये। चर्वित-चर्वण से यह चर्वण तो कही अच्छा है न ? यही तो अहिसात्मक असहयोग है।

इसी कारण नई दुलहिन के कमरे के सामने मित्रो ने पिकेटिग शुरू कर दी।

६

मित्रगण नारी-राज्य मे आ गये थे । यदि वे स्त्रियो के व्यूह को न भेद पाते, तो नई दुलहिन के सिहासन के निकट नही पहुँच सकते । उनका कुछ परिचय सुन लीजिए ।

पहला मोर्चा मुहल्ले की लडकियो के साथ लेना पडेगा । वे दुलहिन के इर्द-गिर्द व्यूह बनाकर खडी है । उधर लूची (मैदे की पूरी) और एसेन्स की खुशबू के मारे लोग आवेश मे आ रहे है, मानो इसी आवेश को तोड देने के लिए मुहल्ले के छोकरो का एक गिरोह वहाँ आ गया । उनमे एक से एक ढीठ है । मुहल्ले की इज्जत बचाने वाली देशभक्ति इनमे कूट-कूट कर भरी है, उसी प्रकार से जैसे दिवाली की सध्या के गुब्बारो मे हवा भरी रहती है । बचपन से ही गली-कूचो मे, विशेषकर अपनी गली मे, इन लोगो ने युद्ध-विद्या का जब-तब अभ्यास किया है । इन वीरो को खबर लगी कि प्रद्युम्न के मित्रो ने नयी दुलहिन के कमरे मे घेरा डाल रक्खा है । सुनते ही वे 'रण देहि रण देहि' कहते हुए घटनास्थल पर आ पहुँचे ।

यद्यपि उनके पास कोई तोपखाना नही था, पर उनमे से हरएक का मुँह एक-एक तोप के समान था । कहते है कि उनके मुँह के सामने कोई ठहर नही पाता था । मुहल्ले के इन तरुणो का नेता नवनीत जितना कोमल था, उतना नवीन भी था । उसने कपट हँसी हँसते हुए कहा—"आप लोग नई दुलहिन को देखने के लिए आये है, ठीक है, पर पहले मुहल्ले की स्त्रियाँ और लडकियाँ दुलहिन देख ले, तब आप लोग तशरीफ का टोकरा ले आये । लेडीज फर्स्ट ।"

दूसरी तरफ से फौरन उत्तर मिला—"तब तो जो लोग लेडीज-मैन है, उन्हे पहले मौका मिलना चाहिए ।"

"नही ! इसका कोई अर्थ नही होता । पहले वे, पीछे आप ।"

मित्रो ने देखा कि उधर का पलडा भारी पड रहा है, इसलिए

पीछे से किसी ने बाग लगायी—"केशव, यह तुम्हारे बस की बात नही है। नीहार को आगे करो, वही आज का बख्तियार खिलजी बने।"

मुहल्ले के लडको के उस पार से, मानो महासमुद्र के उस पार से, आवाज आयी। यह कोकिल-कठी की आवाजथी—"क्यो बख्तियार की जरूरत क्यो पडी ? क्या आप लोग गौड-विजय के लिए आये है ?"—वह मुस्कराई।

इधर से आवाज आयी—"अवश्य ही हम गौड-विजय करेंगे। पाउडर मली हुई गोरी सेना तो पहले ही पीठ दिखा चुकी है। लक्ष्मणसेन की सेना भागी थी, और यहॉ सुलक्षण सेना भागी हुई है। इसीलिए हम है गौडविजयी बख्तियार खिलजी।

इस पर किशोरी हॅस पडी और उसके सामने खडे तरुणो के हृदय मे एक लहर-सी दौड गयी। इससे अधिक न तो समाज अनुमति देता था और न इसकी सम्भावना थी। समुद्र पार के तमसा (टेम्स नदी) तीर्थ से लौटी हुई लक्ष्मीमणि राय की बात और है, जो मादामलकी राय बनकर अपने दूल्हे की बगल मे खडी होकर शादी का केक काटती हुई अपने मित्रो का परिचय अपने पति से करा सकती है। यहॉ तो जितनी बातचीत हुई उतनी ही बहुत थी।

यद्यपि दूल्हे के मित्र दुलहिन से न तो परिचित कराये गये और न इस समय उसकी कोई सम्भावना थी, फिर भी वे वही डटे रहे और मुहल्ले के चन्द हमउम्र लोगो के साथ बाते मिलाते रहे। नई दुलहिन को देने के लिए वे जो कुछ उपहार लाये थे वे भी अभी तक दिये नही गये थे। अभी तक वे उपहार उनके हाथो मे या चादरो के नीचे पडे हुए थे और वही से कुठित होकर बाहर की दुनिया की ओर ताक रहे थे।

यद्यपि ये लोग एक नम्बर 'स्मार्ट' और वाचाल थे, पर यहॉ पर इतने अपरिचित लोगो के बीच, विशेषकर एक नई दुलहिन की उपस्थिति के कारण, वे भी कुछ दुलहिनत्व प्राप्त कर चुके थे। लज्जा तेल की तरह है। यदि तेल पानी के एक किनारे छोडा जाय, तो वह धीरे-धीरे न मालूम कैसे सारे पानी मे व्याप्त हो जाता है।

मुहल्ले के एक प्रतिनिधि तरुण ने अपने एक मित्र से पूछा—"क्यो जी मामा, तुम्हारा उपहार कहाँ है ?

जिससे प्रश्न किया गया था उसने पान से लाल ओठो को उलटा कर कहा—"प्रेजेन्ट क्या कोई मामूली चीज है, बडी बारीकी से प्रेजेन्ट करना पडता है !"

"क्यो, इसमे इतनी छटाई की क्या बात है ?"

"तुम समझते हो, नही है ? अच्छा तो सुनो। इसी दशहरे के दिन मैने अरुण के लिए सेन्ट की एक छोटी-सी शीशी और उसके छोटे भाई के लिए एक नकली बन्दूक खरीदी। अरुण के लिए एक छोटी-सी चिट्ठी भी थी जिसमे लिखा था तुम जल्दी से इसे अपने काम मे लाना। इसके बाद जो नतीजा हुआ वह मै ही जानता हूँ।"

"क्यो, क्या अरुण को सेन्ट पसन्द नही आया ?"

"नही यह बात नही। ऐसा हुआ कि उपहार बदल गया। याने जो भाई का उपहार था वह बहन को मिला और बहन का भाई को। और साथ मे वह चिट्ठी। बिल्कुल प्रलय हो गयी।"

सब लोग हँस पडे। वक्ता ने अनुभव किया कि यह हँसी एक हद तक उन पर थी। इसलिए उसने बात बदलने के लिए एक मित्र को जैसे एकाएक पहचानते हुए कहा—"कुसुम बाबू, नमस्ते! मैने देखा है कि आपने हाग मार्केट से गुलदाऊदी का एक बडा-सा टोकरा खरीदकर मँगवाया है। कितने सुन्दर फूल है !"

कुसुम ने प्रतिवाद करते हुए कहा—"ये गुलदाऊदी नही, डालिया फूल है।"

"वाह साहब, आपने फूल खरीदे और यह नही जाना कि आप क्या खरीद रहे है! मेरे मामा का बाग क्रिसान्थिमम से भरा है और आप इन्हे डालिया बता रहे है! वाह !"

"अच्छा, तुम्हारे मामा का बाग क्रिसान्थिमम से भरा है, जरा इसके हिज्जे तो करो।"

उसने अब हिज्जे करने शुरू किये—"आर आइ सी ·" सब लोग सुनकर हँसने लगे। इससे हिज्जे करने वाला व्यक्ति यह समझ गया

कि वह गलत हिज्जे कर रहा है, इसलिए वह एकाएक घबरा गया। बोला—"नही नही साहब, यह डालिया ही है।"

"जो कुछ भी हो, आइये परिचय हो जाय। आप लोग प्रद्युम्न के मित्र है। आप लोगो की सेवा करना हमारा धर्म है। इसी दौरान मे दुलहिन के इर्द-गिर्द भीड भी कम हो जायगी। प्रद्युम्न, आगे बढ कर मुहल्ले के दोस्तो से अपने इन मित्रो का परिचय कराओ। आगे, आगे बढते आओ।"

प्रद्युम्न हरएक से सब का परिचय कराने लगा। पर वह हमेशा का लज्जाशील व्यक्ति होने के नाते आज वह और भी लजा रहा था। इसलिए दो-एक परिचय हो चुकने के बाद ही नीहार को परिचय करवाने का काम अपने ऊपर लेना पडा। मित्रो का परिचय भी कुछ धुँधले ढग से हुआ। बात यह है कि कवीन्द्र रवीन्द्र ने नारियो के लिए कहा है कि तू आधी तो मानवी है और आधी कल्पना, इसलिए पुरुष भी स्त्रियो से पीछे क्यो रहे।

"यह है निरजन बाबू। माँ-बाप ने शायद यह सोचकर नाम दिया था कि कम उम्र मे ही बहककर दिल पर कोई अजन न पडे या वह किसी का मनोरजन न करे कम से कम जब तक पढ-लिख न ले। पर मित्रमडली मे इनका नाम नारीरजन है। यह हमेशा रगीन कुर्ता पहनते है और स्त्रियो का कोई भी इशारा मिला कि रामायण के 'वह' हो जाते है। कलियुग की विशल्यकरणी याने 'इवीनिग इन पैरिस' इनकी जेब मे सर्वदा रखी रहती है।" इतना कहकर परिचय-दाता ने उसकी जेब से एकाएक वह शीशी निकाल ली और नीहार ने सब को बता दिया कि इस समय यह शीशी आर्यपुत्री के लिए लायी गयी है।

"और यह है सौरभ राहा उर्फ रासभ राहा। इनको गाने का शौक है, और सो भी पक्के गाने का। जब यह गाते है तो खैरियत होती है कि इनके दोनो हाथ हारमोनियम से बँधे रहते है, फिर भी स्वर के जरिये से जितना लात-घूँसा इनसे बन पडता है, यह मारते है। यदि इस कमरे मे प्रवेश करने मे हमारे सामने कोई अड़चन

आती तो आप लोग विश्वास रखें कि हम इनका गाना करवाते, और फिर हम लोगो को भागने का भी रास्ता नही मिलता। खैर, हमारे लिए तो लाइन क्लीयर हो जाती, फिर चाहे कुछ भी हो।"

स्वर के जरिये जितना लात-घूसा इनसे बन पड़ता है, मारते हैं

इस प्रकार से मित्रो का वर्णन चलने लगा। किसी ने यह सोच कर नही देखा कि दुलहिन उनकी इस वाचालता को कहाँ तक पसन्द करती है और कहाँ तक वह उसे समझ रही है।

एक साहब सिर ऊँचा करके दुलहिन की एक झलक देखने के लिए अकुला रहे थे। उन्हे एक झटके के साथ आगे बढाते हुए प्रद्युम्न ने कहा—"यह जो साहब हाथीदाँत का डिब्बा लिये खडे है यह है मेरे मित्र जगबन्धु चक्रवर्ती।"

इस पर मित्रो ने हँसकर प्रतिवाद करते हुए कहा—"नही नही, यह है 'गजबन्धु चक्रवर्ती'। गजबन्धु होने मे प्रमाण की आवश्यकता नही। वह इनके हाथ मे ही मौजूद है। और सरनाम से पेशे का परिचय उसी प्रकार मिलता है जैसे पारसी धोतीवाला मर्चेन्ट कहलाता है, चाहे धोती के वेश से और व्यापार से उसका कोई सम्बन्ध न हो। हमारे यह मित्र बाँके है और बाँकेपन से दुनिया की सारी समस्याओ को सुलझाना चाहते है। किसी भी बात की व्याख्या इनसे सुन लीजिये, उसमे वक्रता ही मिलेगी। इनसे यह पूछ लीजिये कि श्याम बाजार के बाई तरफ राधा बाजार क्यो नही हुआ, तो यह उसकी भी व्याख्या करने पर उतारू हो जायेंगे। हमारे यहाँ एक कराली केबिन है। उसके साइनबोर्ड मे FOWL CHOP के बजाय लिखा है FOUL CHOP, याने मुर्गे की चॉप की जगह लिखा है सडा चॉप। हमारे बाँके मित्र का कहना है कि 'विशुद्ध ब्राह्मण' की दुकान मे यदि मलेच्छ भाषा के हिज्जे मे एक गलती ही हो गई तो क्या बिगडा ? विलायती स्वाद के चॉप न मिले तो न सही, स्वदेशी स्वाद के तो मिल ही जायेगे। इसलिए हमें कराली केबिन को अपनाना चाहिए।"

जगबन्धु, जिसकी तारीफ की जा रही थी, कुछ बोलने के लिए कुनमुना रहा था। वह एकाएक बोल उठा—"मै तो यही कहता हूँ कि सत्यवादी होने के कारण उसकी सहायता की जानी चाहिए।"

सब लोगो ने हँसकर उसका समर्थन किया। इतने मे रमण ने

आकर रोमन तरीके से कह लीजिये या हाइल हिटलर तरीके से, सबको कुछ दिया, जिसे अभिवादन कहा जा सकता है। उसे देखते ही कवि नीहार गद्‌गद् हो गया और बोला—"यह है रोमन। पिता-माता ने इनका नाम रमणचन्द्र रक्खा था, पर इनकी दृष्टि पाश्चात्य जगत की ओर लगी रहती है, इसलिए इन्होने अपना नाम रोमन रक्खा है। कालिज मे यह इतिहास पढते है, पर ऑनर्स क्लास के यह परमहस परम बगुले की भाँति सबको यह समझाने की अपचेष्टा करते रहते है कि बगाली और रोमन एक ही गोत्र की दो जातियाँ है।"

इस प्रकार की मलेच्छ बातचीत पर बक्केश्वर के हिन्दुत्व को ठेस लगी। उसने गाल पर हाथ रखकर कहा—"राम राम!"

नीहार बोलता गया—"आप सभी जानते है कि मैक्समूलर नाम के एक जर्मन पडित थे। वे सूत्र शिखाधारी पडित तो नही थे, पर उन्होने यह प्रमाणित कर दिया था कि हम और साहब लोग सब एक ही आर्यवश से उत्पन्न है। इसी तरह हमारे रोमन ने भी यह प्रमाणित कर दिया है कि प्राचीन युग के रोमन और इस युग के बगाली एक ही थैली के चट्टे-बट्टे है। रोमन ने तो इसे बल्कि स्वयसिद्ध मान लिया है। फिर भी वह प्रमाण देने की कुछ चेष्टा तो करते ही है। वह कहते है—'इतिहास मे यही दो महाजातियाँ ऐसी है, जो सिर पर कोई टोपी आदि नही ओढते।' रोमन लोग उत्सव के दिन पत्तो का मुकुट पहनते थे और हम लोग शादी के दिन शोले का मुकुट पहनते है। ऐसे महान् आविष्कारक को जल्दी ही व्याख्यान देने के लिए अमेरिका भेजना चाहिए।"

मुहल्ले के लोगो ने इसका समर्थन किया। नीहार फिर कहने लगा—"परमहस रामकृष्ण ने सर्वधर्म-समन्वय किया था, हम लोग सर्वभाषा-समन्वय पर तुले हुए है। फल यह होगा कि न तो बगाली भाषा और न अग्रेजी भाषा, दोनो मे से एक को भी हमे भली भाँति सीखना नही पडेगा। यदि हम मातृभाषा के चार शब्द बोलते है, तो पाँच अग्रेजी, दो अरबी, एक तुर्की शब्द भी कह देते है।" पीछे से कोई बोला—"भई, जी की बाते खोलकर रखदी तुमने। इस दृष्टि से देखा जाय तो

हम बडा भारी कार्य कर रहे है। पर अपनी इस भविष्य-मुखी प्रवृत्ति के फलस्वरूप हम अपनी भाषा मे पारगत नही हो पाते और हमारे देश के छात्र मातृभाषा मे फेल भी बहुत होते है।"

नीहार ने फिर से रोमन और बगालियो के प्रसग को उठाते हुए कहा—"रोमन वेश भी बगालियो की धोती और चादर की तरह था। वे पहनते थे टोगा और टिडनिक। हमारे यहाँ के देहात के लोग अभी तक घुटनो तक ही धोती बाँधते है बिल्कुल रोमन ढग की। शहरी आदमी लम्बी धोती बाँधकर अपने सामने झाडू-सी देते चलते है हालाँकि यह मना है। फिर भी यह नया फैशन है।"

इस बीच मे हरिहर नाम का एक तरुण सामने आया। नीहार ने उसका परिचय कराते हुए कहा—"यह रहे मि० हरिहर। हम लोग इन्हे अरहर कहते है। यह इतिहास के रिसर्च स्कॉलर है। रिसर्च मे इनके साथ मुकाबिला करे ऐसा आदमी सारे बगाल मे नही मिल सकता। 'ओरिजिनल जीनियस' की यह साक्षात् मूर्ति है।"

किसी ने पूछा—"इसका मतलब ?"

नीहार बोला—"हरिहर अपने रिसर्च मे न तो किसी पुस्तक की ही सहायता लेता है और न किसी प्रस्तरलिपि की। यदि बिना परिश्रम और बिना मूलधन के कारबार करना चाहो तो 'अरहर' के थीसिस पढो। इनका थीसिस है मसूर की दाल पर। इन्होने साबित किया है कि स्वदेश-प्रेम के कारण हिन्दुओ ने मसूर की दाल का नाम विटा-मिन की लिस्ट से हटा दिया है। इनका कहना है कि मसूर मिश्र देश से कोई न कोई सम्बन्ध रखता है। इसलिए इसको खाकर स्वदेशी देह की रक्षा नही करनी चाहिए।"

अब इसकी अति हो रही थी। इतने मे कोई उधर से कह उठा—"दूल्हा जिन पर जान देता है उन नीहारिका देवी का परिचय तो हो जाय।"

इतना कहना था कि सभास्थल पर मानो वज्रपात हो गया। वही पडोस की स्त्रियाँ युवको मे से अपनी-अपनी कुमारी लडकियो के लिए मन ही मन दामाद चुन रही थी। उन्हीं मे से एक स्त्री मोक्षदा-

सुन्दरी को यह खबर देने को दौडी । आगे क्या होगा यह जानने

कराली केबिन

की उत्सुकता सभी की आँखो मे थी पर मुँह पर था बनावटी दुख ।

मोक्षदा तक यह बात पहुँचते ही सब स्त्रियो के मुँह पर सहानुभूति छा गयी थी। सभी जानना चाहती थी कि मोक्षदा अब क्या करेगी ।

एक अधेड उमर की स्त्री सफेद बालो पर थोडी-सी घूँघट खीचती हुई बोली—"हमने पहले ही कहा था कि लडके को सम्हालो, पर तुमने तो उसे छूट दे रक्खी थी । अब धक्का सम्हालो ।" मोक्षदासुन्दरी सन्न-सी रह गई कि जो कुछ हुआ सो हुआ, पर यह भडाफोड और सो भी इस अवसर पर बडा बुरा रहा। स्त्रियाँ तो कानाफसी मे यहाँ तक कहने लग गयी कि यह नाम परिचित मालूम होता है और हो न हो यह वह एक्ट्रेस तो नही है जो 'मिश्र कुमारी' और 'रेशमी रूमाल' आदि नाटको मे काम कर चुकी है । स्त्रियो को एक रोचक विषय मिल गया, और जैसा कि होता है एक ही विषय से शाखा-प्रशाखा के रूप मे कई ऐसे रोचक प्रसग निकलते गये । और दुलहिन की क्या हालत हुई ? उसे काठ मार गया । इतने मे कवि नीहार सामने आ गया । वह हाथ जोडकर दुलहिन के सामने खडा हो गया और अपना उपहार, एक काम किया हुआ सिन्दूर का डिब्बा, सामने बढाते हुए बोला—"मेरा नाम नीहार है, पर इन लोगो ने मेरा नाम नीहारिका रक्खा हुआ है ।"

यह खबर भी स्त्रियो मे पहुँची और उनकी हालत वैसी ही हुई, जैसे कोई चलने के लिए पैर बढाए और उसके बढे हुए पैर मे लकवा मार जाय । या कोई कुछ कहना चाहे और उसका मुँह खुला का खुला रह जाय । मोक्षदासुन्दरी इस बीच मे यहाँ आ चुकी थी और लोगो ने उनकी तरफ देखा तो ऐसा मालूम हुआ कि वे फट पडने वाली है । सब लोग अचकचाकर रह गये ।

फ्रांसीसियो ने जर्मन आक्रमण से बचने के लिए मैजिनो लाइन की रचना की थी। इसी प्रकार मोक्षदासुन्दरी ने अलाय-बलाय से अपने घर की रक्षा करने के लिए एक अव्यर्थ लाइन की रचना की थी। वर्तमान परिस्थिति मे बाहर की हवा से बचना बहुत जरूरी था। बाहर से हवा आयी कि उसके साथ-साथ नयी-नयी सभ्यताओ के कीटाणु भी आ गये।

उनकी मैजिनो लाइन

उनकी यह मैजिनो लाइन क्या थी ? वह मैजिनो लाइन यह थी कि वे प्रद्युम्न से निरन्तर कहती रहती थी कि कालिज मे पढो, मित्रो मे घूमो, गुलगपाडा करो और भी जो

चाहो सो करो, पर सूर्यास्त के साथ-साथ घर के अन्दर अवश्य दिखाई पडो। इस लाइन को वे किसी भी प्रकार टूटने नही देती थी।

इसीलिए ज्योही धरती पर सन्ध्या उतरने लगती त्योही प्रद्युम्न घर जाने के लिए उसुर-खुसुर करने लगता। और मित्र भी चूँकि ऐसे थे जो लिफाफा देखकर खत का मजबून भाँप जाते थे, इसलिए उसे बनाने लगते। जगबन्धु प्रद्युम्न के मुहल्ले मे ही रहता था। बोला—"चलो तुम्हे पहुँचा आये।"

प्रद्युम्न ने करुण चेहरा बनाकर कहा—"नही नही, तुम लोग मजे मे बाते कर रहे हो। मै तुम्हारे रास्ते मे रोडा क्यो अटकाऊँ? मै आप ही चला जाता हूँ।"

उधर से हरिहर उर्फ अरहर ने मटर-सा चबाते हुए कहा—"बेटा, उडो मत। दिखा तो रहे हो जैसे माताजी की ज्यादती है, पर मन ही मन लड्डू फूटते होगे। तुम तो इस प्रकार तडप रहे हो जैसे मणि खाकर साँप तडपता है। जगबन्धु, तुम जाओ और इसे मकान के दरवाजे मे अन्दर तक कर आओ। देखना, कही बैलगाडी के नीचे न आ जाय। अब इसे हृदय की नयी बीमारी जो लग गई है!

प्रद्युम्न को बडा आश्चर्य हुआ कि यह लोग क्या कह रहे है। बोला—"जानते हो, हमारे सारे खानदान मे यह रोग कभी किसी को नही रहा।"

"यह तुमने ठीक कहा है। जिस कुल मे जल्दी शादी का रिवाज होता है उसमे हृदय-रोग का प्रश्न ही नही उठता। पहले से इजेक्शन जो लग जाता है।"

एक अन्य मित्र बोला—"हमारे मोना भैया इस सम्बन्ध मे विशेषज्ञ है। विवाह के बाद उनका तबादला आरामबाग मे हो गया। आरामबाग तो जानते होगे? वहाँ मलेरिया के मच्छरो का बहुत आराम रहता है। वह उनके लिए नन्दन-कानन है। यही सोचकर शायद लोगो ने उसका नाम आरामबाग रख दिया है। पर मोना भैया भी अजीब जीवट के आदमी थे। कई दिनो तक तो वे मच्छरो से बिना किसी हथियार के लडते रहे। पर जब मच्छरो का पलडा भारी

पडने लगा तब भैया ने आरामबाग के मच्छरों से पेश पाने के लिए राम का नाम लेकर कुनीन से काम लेना शुरू किया। उठते-बैठते, सोते-जागते, यहाँ तक कि स्वप्न में भी कुनीन चलने लगी। एक दिन रात को भैया ने स्वप्न मे देखा कि स्वय श्रीकृष्ण जी 'मशकसूदन' बनकर तोप दाग रहे है। भन-भन करते हुए तोप दगती जा रही थी और मच्छर-सेना मे भगदड मची हुई थी। तोप की आवाज से भैया जाग गये। वे कृष्णजी को थैंक्स देने ही वाले थे कि उनको मालूम हुआ कि यह कृष्णजी का तोपखाना नही था बल्कि मच्छरो का तोपखाना था। और वे बाहर से कह रहे थे—'मशहरी के अन्दर छिपा हुआ क्यो बैठा है ? नामर्द कही का ! खुले मे आये तो दो-दो हाथ हो जाये। हम भूखे है और सब शेर है'।"

"फिर क्या हुआ ? क्या तुम्हारे भैया ताव मे आ गये और बाहर निकलकर दो-दो हाथ करने लगे ?"

"अरे, सुनो तो। न तो वहाँ कुरुक्षेत्र का मैदान था और न 'हृदयदौर्बल्य' आदि कहकर श्रीकृष्ण उपदेश कर रहे थे, पर मोना भैया का हृदय सचमुच दुर्बल हो गया। वे इतने घबराये कि उन्होने डाक्टर को बुला भेजा। पर डाक्टर भी ऐसे महापुरुष थे कि वे आये ही नही।"

मित्रो ने पूछा—"क्या स्वय डाक्टर साहब भी मलेरिया मे मुब्तिला थे ?"

"नही, डाक्टर और वकील इतनी आसानी से काबू में नही आते। कहला भेजा कि 'नयी शादी के बाद कुछ घबराहट होती ही है। ठीक हो जायगा।' भैया सुनकर आगबबूला हो गये। बोले—'यह वह शिकायत नही है, यह तो दूसरी बात है।' "

बात को बीच मे काटकर जगबन्धु ने सभा भग करने का नोटिस दिया। बोला—"रहने दो। प्रद्युम्न को जाने दो। देखते नही हो बेचारा घबरा रहा है।"

इसमे सन्देह नही कि प्रद्युम्न घबरा रहा था, पर घर जाने के लिए नही। घर मे कैसे क्या होगा, यही सोचकर वह घबरा रहा था। घर

की मैजिनो लाइन के अन्दर घुसते ही प्रद्युम्न घबराने लगा ।

मोक्षदा समझती थी कि घर मे आते ही लडका हाजिरी दे जायेगा। सम्भव है उस समय तरकारी काट रही हो या पडोसिनो से बतकही कर रही हो, पर लडका जरूर 'मै हाजिर हूँ' सूचक कुछ कह जायेगा। वे जिस प्रकार अपने घर पर शासन करती थी, वह बगाल के भाग्य मे भी कभी नही हुआ था। हिटलर को चाहिए था कि बगाल की स्त्रियो से शासन-कार्य सीख लेता ।

हाजिरी देकर प्रद्युम्न बरामदे से अपने कमरे की ओर जा रहा था कि इतने मे भीतर से आवाज आई—"क्या है रे? कैसी चाँद-सी बहू लाई हूँ!"

इसमे सन्देह नही कि बहू चाँद-सी ही थी। चाँद की ही तरह स्निग्ध लेकिन मन मे आग लगाने वाली। चाँद की भाँति ही अनुभूतिशून्य परन्तु दूसरो के मन को अनुभूतिशील बनाने मे शक्त ।

प्रद्युम्न अपने विचारो मे डूबा हुआ चलने लगा। वह तो चाँद है और मे चकोर हूँ। मै उसकी तरफ घूरता रहता हूँ, पर वह ऐसे चली जाती है मानो मै कोई जड-पिण्ड हूँ। सीढी चढते-चढते वह कुछ शात हो गया और सोचने लगा कि परिवार-परिजन के अन्दर से भी उसकी चाँदनी छन-छन कर आ रही है। उसने कमरे मे प्रवेश करके देखा कि वह वहाँ नही है।

धत् तेरे की! इतना बडा मकान है, अब खोजूँ तो कहाँ खोजूँ? इससे तो अच्छा यह था कि कोई पर्ण-कुटीर होती तो कम से कम इस प्रकार खोज तो नही करनी पडती। और न दुनिया भर के रिश्तेदार यहाँ मारे-मारे फिरते, जिनके डर के मारे एक झलक भी मिलनी मुश्किल हो जाती है। शायद इन्ही रिश्तेदारो के डर से माँ का आँचल पकडे बैठी रहती है। प्रद्युम्न ने नाराज होकर सोचा कि मै अब क्या करूँ? सम्भव है कि वह माँ की छत्रछाया मे पान बना रही हो। इसलिए भडार वाले कमरे की ही तरफ चलूँ, शायद वहाँ कुछ नयी रोशनी मिले। मै किसी की परवाह नही करता। ये रिश्ते-

दार अपने को क्या समझते है ? मै जाऊँगा जरूर । हाँ, एक बात है कि मुझे एक मिनिट का सुख मिलेगा तो उसे एक घण्टे तक शर्म का सामना करना पडेगा ।

फिर भी प्रद्युम्न उधर ही पहुँचा । वहाँ इस समय माताजी अपनी बहू के साथ विराजमान थी । पर माँ के पास भी दुबारा आने का कुछ कारण तो होना ही चाहिए । वह चट से पान माँग बैठा । माँ को बडा आश्चर्य हुआ । बोली—"इस समय पान कैसा ? खाना खा लिया क्या ?"

सच तो है । पर जब माँग ही बैठा तो उसका कारण बतलाना भी जरूरी था । कारण कोई समझ मे आता नही था । इसलिए बनाना पडा । बोला—"आज मेरे एक मित्र की बहन की मँगनी थी । वहाँ मिठाई बहुत खा आया हूँ ।"

"यह कैसे हो सकता है ? मल-मास लग चुका है, फिर मँगनी कैसी ?"

प्रद्युम्न घबरा गया । बुरा हो इन पत्रा बनाने वालो का, कही मलमास है तो कही कुछ है । पता नही लगता कि कब क्या होता है । वह पहले से भी अधिक घबरा गया । फिर भी बोला—"वे लोग नये फैशन के है । मलमास आदि नही मानते । बालीगज के रहने-वाले है न ?"

माँ ने आश्चर्य के साथ कहा—"बडी अजीब बात है, पत्रा नही मानते और शादी हो रही है ! कही वे ब्राह्म-समाजी तो नही है ?"

प्रद्युम्न ने सोचा यह अच्छी आफत आई । प्रश्नो की झडी लगी रहेगी । न मालूम कितना झूठ बोलना पडे । इसलिए उसने बचाव करते हुए कहा—"दूल्हा विलायत होकर आया है । उसकी शादी कलेन्डर देखकर हो रही है, न कि पत्रा देखकर । खैर, जो भी हो, मेरा क्या ? वह जाने और उनका काम जाने । जल्दी से दो पान लाओ । जी मचल रहा है ।"

कहकर उसने चोरी से दूसरी तरफ दृष्टि डाली । पर तब तक जिसकी ओर दृष्टि डाली गयी थी उसने घूँघट के अन्दर ठीक उसी प्रकार से

डुबकी लगा ली थी जिस प्रकार रसगुल्ला रस के अन्दर डूबा रहता है।

इस प्रकार से चुपके-चुपके देखना और अत्यन्त पास होकर भी दूर रहना क्या इसकी तुलना गहन रात्रि मे, जगल पार करते समय अभिसार करने के रोमास से की जा सकती है ? इसका उत्तर देना कठिन है, क्योकि जिसे इसका तजुर्बा है उसे उसका नही है, और जिसे उसका है उसे इसका नही है।

पता नही मोक्षदासुन्दरी ने पानवाली घटना का क्या परिणाम निकाला, पर प्रद्युम्न की दुलहिन ने उसका जो अर्थ निकाला वह उसी दिन रात को मालूम हो गया। सुरो ने शिकायत की—"तुम अजीब घनचक्कर हो ! तुम्हे हया-शर्म कुछ भी नही ! और फिर तुम मौका-बेमौका भी नही देखते। तुम्हे मालूम नही कि कौशल्या फूफी आदि महिलाएँ बहुत खिल्ली उडा रही थी। तुम्हारे ये ढग हमे अच्छे नही लगते।"

इसके उत्तर मे प्रद्युम्न डटकर बैठ गया। बोला—"तुम्हे क्रोध तो करना चाहिए 'मौसी-फूफी एण्ड कम्पनी' के ऊपर, पर तुम कर रही हो मुझ पर। आखिर मैने ऐसा कौनसा काम किया जो मुझे नही करना चाहिए था ?"

बनावटी क्रोध करती हुई सुरो बोली—"वे तो ऐसे हँसती है, मानो कोई भारी भडाफोड हो गया हो।"

प्रद्युम्न बोला—"इसमे सन्देह नही कि 'मै' अब 'मै' नही रहा। पर ताज्जुब तो यह है कि 'तुम' अब भी 'तुम' ही बनी हुई हो। हमारे कालिज के मित्र यह कहते हैं कि जरा-सी बात, जरा-सी झलक ही पागल करने के लिए यथेष्ट होती है। फिर यह कहो कि मेरी हालत क्या होनी चाहिए।"

सुरो बेचारी सब कुछ समझती थी। इसके लिए न तो महाकाली पाठशाला की अन्तिम श्रेणी तक पढना जरूरी था और न यौवन की यज्ञशाला मे दाखिल होने की जरूरत थी। हमारे ग्रीष्म-प्रधान देश मे यह गरमी तो आप ही आप आ जाती है। बचपन मे गुडियो की शादी से लेकर शिव-पूजा तक जितनी भी बाते होती है, सभी धीरे-

धीरे आँखे खोल देती है। इसलिए प्रेम की बारहखडी पढने के लिए पुस्तक की भाषा की आवश्यकता नही होती। कुछ लजाकर वह बोली—“तुम कालिज मे पढते हो, मै तुम्हारी सारी बाते समझ नही पाती।”

प्रद्युम्न ने चेहरे पर गम्भीरता लाते हुए कहा—“मै तुम्हे तुम्हारी ही भाषा मे सब बाते समझाऊँगा। मुझे किताबी भाषा से प्रेम नही है।”

सुरो खिलखिलाकर हँस पडी। बोली—“पडित जी महाराज, आप मेरे लिए कुछ कष्ट न करे। तुम्हारी जो बाते मेरी समझ मे नही आती वे ही मुझे अधिक दिलचस्प लगती है। अवश्य ही पुस्तको मे इतनी दिलचस्प बाते नही लिखी होती।”

“पुस्तको मे कौनसी बाते लिखी होती है?”—कहते हुए प्रद्युम्न पास खिसक आया।

सुरो कुछ दूर हट गयी। प्रद्युम्न बोला—“जरा पास आओ। मै कुछ विद्या सिखाना चाहता हूँ।”

सुरो और भी दूर हट गयी। तब तरुण पति ने व्याकुलता को दबाकर कहा—“प्राचीन पडितो ने प्रिया के मुख की तुलना कमल से की है, पर कमल मे काँटे होते है, वह कुम्हला भी जाता है और हम लोग बहू की तुलना पुस्तक से करते है, जिसमे न तो काँटे ही होते है और न वह कुम्हलायेगी ही।”

“पर इसमे पडितजी की बेत का भय है।”

“नही, वह भी नही है, क्योकि जब दोनो विवाह-मण्डप मे एक बात पर सहमत होकर एक साथ आ चुके है, तो बेत का कोई भय नही है।”

सुरो सहमकर बोली—“तो इसमे गुरु कौन है और छात्र कौन है? मै गुरु बनने को तैयार नही हूँ।”

“डरो मत, इसमे शिक्षा स्वयं ही चलती है। जिसको जितनी गरज है वह उतना ही आगे बढेगा। जर्मन कवि ‘हाइने’ यही उपदेश दे गये है।”

इस पर सुरो हँस पडी—“यह हाय-हाय कौन है?”

यह वह उम्र है कि साथी के मुख से जो बात निकल जाय वह

काव्य बन जाती है। नये प्रेमी के कानो मे अपनी प्रेमिका की वाणी जितनी मीठी लगती है, वाल्मीकि, शैक्सपीयर, रवीन्द्रनाथ उससे अधिक मधुर कुछ भी नही लिख पाये। इसलिए हाय-हाय शब्द भी प्रद्युम्न के कानो मे जलतरग की मधुर ध्वनि की तरह लगा। वह अधीर आवेग मे और भी पास चला गया, इतने पास कि फूलो की माला का व्यवधान भी न रहा। पर सुरो केवल शर्मीली, लजीली तरुणी-मात्र न थी उसमे एक दूसरा पहलू भी था। वह एकाएक पैतरा बदल कर बोली––"तुम तो इम्तहान की तैयारी कर रहे हो न, क्या इसी का नाम पढना है?"

"हॉ, यही मेरा पढना है। आज छापे की पुस्तक न पढकर जीवित पुस्तक पढने को जी कर रहा है।"

"यह कैसी पढाई है?"

"क्यो, क्या तुम्हारे मुखारविन्द को पढना पढना नही है?"

सुरो ने तय कर लिया कि वह पराजित नही होगी। बोली—"इस पढाई से इम्तहान मे कितने नम्बर आयेगे, यह तो साफ जाहिर है।"

"क्यो? इतनी विद्या होगी कि पण्डित लोग भी हार मानेगे।"

"इस विद्या का क्या नाम है?"

आवेश मे ऑखे बन्द करके सुरो का ऑचल पकडकर प्रद्युम्न बोला—

"पोथी पढि पढि जग मुआ,
पडित भया न कोय।
ढाई अच्छर प्रेम के,
पढै सो पडित होय॥"

सुरो उर्फ सुरधुनि को याद आया कि उसकी एक सहेली के पति भी शादी के बाद कविताओ मे बात किया करते थे। उस समय सहेली को यह मालूम होता था कि उसका पति बडे आराम से रसगुल्ले खा रहा है। पतिदेव कविता सुनाने मे ही व्यस्त थे। पत्नी पर उसका क्या प्रभाव पड रहा है यह समझने की कोशिश नही करते थे।

सुरो ने मन मे सोचा कि चाहे वह कविता समझे चाहे न समझे,

चाहे जवाब दे सके या न दे सके, पर वह किसी दूसरे को भाषा में अपने मनोभाव प्रकट करने को तय्यार नही थी। इसके साथ ही उसकी नसो मे मधुरता आ गयी पर फिर भी वह टस से मस नही हुई। इतने मे उसने देखा कि प्रद्युम्न उसके सामने घुटने टेककर बैठा हुआ है और बाये हाथ को सीने पर रखकर दाहिने हाथ को फैलाते हुए कह रहा है—

"अयि विम्बाधरोष्ठे, मै घुटने टेककर प्रार्थना करता हूँ कि मुझे आरक्त अधर पर चुम्बन मुद्रित करने की अनुमति मिल जाय।"

सुरो को याद आया कि उसकी सहेली के पति ने भी ऐसा ही किया था। इस पर उसकी सहेली ने जो उत्तर दिया था वह भी उसे याद था। वह एकाएक बोली—"मुद्रित कर लेने की अनुमति है पर प्रकाशित करने की नही।"

प्रद्युम्न ने वर ग्रहण करने मे विलम्ब नही किया। फिर बोला— "प्रिये, तुमने मुझे विम्बाधर का अमृत पिलाया, अब मै कम्बुकण्ठ का हलाहल पीकर नीलकण्ठ होना चाहता हूँ। मै तुम्हे अपने कण्ठ से लगाता हूँ।"

अब इसके उत्तर मे कुछ कहा नही जा सकता। प्रिया के स्पर्श से जो कवि बनता है वह नीरस कवि नही बन सकता। वाल्मीकि क्रौञ्च प्रिया का दुख देखकर कवि बने थे। ऐसे ही प्रत्येक नवीन प्रेमी प्रिया के सुख-स्पर्श से प्रेमी बन जाते है। प्रद्युम्न की भी यही दशा थी। आँख बन्द करके उसने बोला—"जिस दिन वधू मिलेगी उस दिन मै उसे महुआ नाम से पुकारूँगा।" सुरो को अच्छा भी लग रहा था। साथ ही लज्जा भी आ रही थी। बहुत आयास के बाद वह बोली— "तुम मुझे क्या समझते हो, क्या मै कोई तमाशा हूँ?"

प्रद्युम्न ने रवीन्द्र की कविता मे उत्तर दिया—"तुम अधखिली कली हो। तुम आधी मानवी हो और आधी कल्पना।"

नये वर-वधू नये पाले हुए तोता-मैना की तरह होते है। उन्हे विवाह के पिजरे मे बन्द करके लोग तमाशा देखा करते है। सब लोग आकर उसे हिलाते-डुलाते है। या यो भी कहा जा सकता है कि विवाह एक भूचाल की तरह है और उसकी कँपकँपी बहुत दिनो तक चलती रहती है। जो लोग इस पिजरे मे फँसे होते है उनको चाहे जैसा लगे, पर रिश्तेदारो के मजे रहते है।

जब ब्याह की शहनाई बहुत पुरानी चीज हो जाती है तब भी बहुत दिनो तक उसकी लहर उठती रहती है, और ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार हमारे रासभ राहा के ध्रुपद की लहर बहुत देर तक कानो से टकराती रहती है।

इसके साथ ही साथ दुलहिन को लेकर गुडिया खेलना और दूल्हे को लेकर फिरकैयाँ देना जारी रहता है। इसी बीच मे दो-चार कॉटे चुभा देना या डक मारना भी हो जाता है। शहद और डक, कॉटे और फूल, मौसेरे-फुफेरे भाइयो का यही स्वरूप है।

मौसेरे-फुफेरे भाइयो तक तो गनीमत है, पर मौसी और फूफी के नाते जो रिश्तेदार लगते है वे भी टरकना नही चाहते। जिसके घर मे ब्याह हुआ है वह यदि रुपये वाला हुआ तो और भी मुसीबत हो जाती है। यदि लोग घर की मालकिन के मायके के हो तो उनकी मुफ्तखोरी बहुत दिनो तक चलती रहती है, क्योकि वे तो मदद करने के लिए आये हुए होते है। जब तक सब नही चले जाते तब तक वे डटे रहना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझते है। इसी से अभी तक मोक्षदासुन्दरी के फुफेरे बहिन के चचा आज तक इसी मकान मे ठहरे हुए है। वह सबके 'रागा' भैया कहलाते थे।

साराश यह है कि अभी बहुत से रिश्तेदार डटे हुए थे। उधर प्रद्युम्न लालायित था कि जल्दी कालिज जाना शुरू करे, पर सब

लोग उसमे बाधक हो रहे थे। अजीब दो फदो मे उसकी जान फँसी हुई थी। यदि वह लोगो से यह कहता कि अब मै कालिज जाना चाहता हूँ तो रिश्तेदार पुन यह अभियोग लगाते कि कालिज मे कोई प्रेमिका है जिससे मिलने के लिए वह व्याकुल है, और यदि वह कालिज जाने मे देर करता तो यह डर था कि कालिज पहुँचने पर मित्र लोग उसकी बुरी तरह खबर लेगे।

फिर घर रहने से फायदा भी कुछ नही था। दिन भर स्त्रियाँ दुलहिन को ऐसे घेरे रहती थी कि उसकी हालत अशोक-वाटिका मे कैद सीता-सरीखी हो गयी थी। ये त्रिजटा, जटिला और कुटिला उसे एक मिनिट के लिए भी खाली नही छोडती थी। दिन भर मे एक पलक भी तो एकान्त नसीब नही होता था। प्रद्युम्न को इन राक्षसियो पर बहुत क्रोध आता था पर वह कह कुछ नही सकता था। रिश्तेदार जो ठहरे! और फिर गुरुजन!

इस प्रकार तडप-तडप कर घर मे घुलने के बजाय कालिज मे चले जाना कही अच्छा था।

अन्त मे प्रद्युम्न ने निश्चय कर लिया। वह धोबी द्वारा धुली हुई धोती आदि पहनकर घर से निकलने ही वाला था कि उधर से रागा भैया ने उसे पकड लिया। बोले—"अरे, सवेरे-सवेरे किधर जा रहे हो? अभी से गठबन्धन तुडाकर चलने लगे?"

रागा भैया ही क्या, इस मुहल्ले के सभी लोग जानते थे कि पौ फटते ही दुलहिन अपनी सास की छत्रछाया मे दबक जाती है। फिर भी मजाक करने पर कोई टैक्स थोडे ही लगा है? दूसरे के दाम पर जरा हँस लेने मे बुराई ही क्या?"

कुछ लज्जित होकर प्रद्युम्न ने कहा—"कालिज का समय हो गया। आज ग्यारह बजे क्लास है।"

"तो इसमे क्या?"—रागा भैया हँसी के मारे लोट-पोट होने लगे। बोले—"तुम लोग जैन्टिलमैन-ऐट लार्ज हो। खुशी हुई गये, न खुशी हुई न गये।"

इस बीच मे प्रद्युम्न को भी कुछ हिम्मत आ गयी। वह बोला,

इसका मतलब यह है कि आप हमे रस्सी तुडाया हुआ बैल कह रहे है । रस्सी तोडने कौन देता है ? वहाँ तो परसेन्टेड के नागपाश मे बँधे हुए है । इसके अतिरिक्त अक्सर ट्यूटोरियल क्लासे भी लगती रहती है । हमारे अध्यापक नवीन बाबू उम्र मे प्राचीन पर सबक लेने मे अर्वाचीन है । हमेशा सबक लेते है ।"

रागा भैया ने सवेरे-सवेरे मोतीचूर और छैना के पन्तुआ से दिवस का सूत्रपात किया था । इसलिए मीठे मुँह से बोले—"यह तो बडे कष्ट की बात है, पर इसमे चिन्ता की बात कुछ नही । हमने तो तुम्हारे लिए उत्तरा ला दी है । उसे सैनिक वेष मे नित्य कालिज भेज दिया करो, उसका चन्द्रमुख देखकर उत्तर स्वय आ जायगा ।"

पता नही इन बातो के कहने मे उनका उद्देश्य क्या था, पर किसी भी बहाने से दुलहिन का जिक्र आ जाना प्रिय मालूम होता था । इसमे बडा रस था । स्वय जिस विषय का उल्लेख नही कर सकते उसका उल्लेख दूसरे करदे तो बहुत ठीक रहता है । यह ठीक उसी प्रकार है जैसे मूल धन से अधिक खुशी उससे आने वाले सूद से होती है । इसलिए यह सुनकर प्रद्युम्न की बाछे खिल गयी ।

पर कालिज मे एक बार तो जाना ही था । विशेषकर तब जब कि कपडे पहने जा चुके थे । अब यदि मँझधार मे रुक जाते तो न इधर के रहते न उधर के । घाट और घर के बीच रह जाने की स्थिति कोई अच्छी नही कही जा सकती । भैया से तो किसी प्रकार बच गये पर मौसी-फूफी एण्ड कम्पनी से बचना असम्भव था । पता नही, वे किस स्थल को निशाना बनाकर तीर मार दे । तीर लगता तो लगता, नही तो तुक्का तो था ही । और पता नही उस तुक्के से कौनसा चक्का घूम जाता । इन सारी बातो को सोचकर वह बोला—"आखिर पढना तो है ही । फिर विश्वविद्यालय की तरफ से बडी सख्ती है । फेल होने वालो की सख्या दिन-ब-दिन बढती जा रही है । नम्बर के नाम पर ईश्वर का नाम मिलता है । बस, एक दम साइन ऑफ दि क्रास ।"

इस पर रागा भैया बोले—"अच्छा यह बात है ? मुझे स्मरण आता है कि 'साइन ऑफ दि क्रास' नाम से एक चित्र इन दिनो

चल रहा है।"

"बात एक ही है। वह हालीवुड का चित्र है और यह हमारे कलकत्ते शहर का चित्र है। जब परीक्षा का परिणाम निकलता है तो वह क्रास ही क्रास रहता है।"

भैया बोले—"तो तुम्हे इसकी क्या चिन्ता है ? पास हुए तो अच्छी बात है नही तो तुम्हारी बला से। तुम उन लोगो मे थोडे ही

साइन ऑफ़ दि क्रास.

हो जिनका जीवन विश्वविद्यालय के पास और फेल पर निर्भर है। तुम तो उन लोगो मे हो जिन्हे नौकरी की फिक्र नही करनी पडेगी। बल्कि नौकरी ही तुम्हारी फिक्र करेगी। पास होते ही नौकरी स्वयं-वरा होकर तुम्हारे निकट आ जायगी।"

प्रद्युम्न बोला—"यह सब कहने की बाते है। आजकल बडे-बडो को नौकरी के लाले पडे रहते है। कितनी ही समस्याएँ है ? मै नही चाहता कि जिस किसी तरह लुढकते-पुढकते परीक्षा की वैतरणी थर्ड डिवीजन की नाव पर पार करूँ। मै तो चाहता हूँ कि अब की बार फर्स्ट क्लास प्राप्त करूँ।"

इस बीच दिखाई पडा कि ननी डाक्टर अपने शरीर-रूपी सारगी पर सूट चढाये आ रहे है। आ भी रहे थे सैनिक ढग से। वे शायद इस मन्त्र मे विश्वास करते थे कि शरीर ईश्वर के हाथ मे है पर चाल अपने हाथ मे है। चश्मा नाक पर है या नाक चश्मे पर सवार है, यह बताना कठिन था। हाथ मे एक हल्का-सा बैग और स्टेथेस्कोप था। दोनो की हालत ऐसी ही हो रही थी कि अब गिरा तब गिरा।

ननी डाक्टर ने पास-फेल के सम्बन्ध मे जो बाते चल रही थी उनका कुछ अश सुना था। एकाएक बोल उठे—"अच्छे नम्बरो से पास करोगे तो कौन शेर मार लोगे ? मैने इतने परिश्रम से पढा पर क्या हुआ ? माता सरस्वती के हस ने करीब-करीब चोच मारकर मुझे आधा कर दिया। यहाँ का नही विलायत का पास हूँ, पर पूछता कौन है। सब मरीज उसी डाक्टर पतितुडी के पास जाते है जो तीन-तीन बार फेल हो चुका है। वह साथ ही लीडर भी है।"

प्रद्युम्न ने सहानुभूति जताई—"सचमुच ननी डाक्टर बडे शरीफ है। वक्त-बे-वक्त उनसे मन की वात भी कही जा सकती है। पति-तुडी तो कई बार मरीजो को भगा देते है, और जितना ही वे उनसे दुर्व्यवहार करते है उतना ही मरीज उनके पास अधिक जाते है। यह कहिए कि मरीजो पर भी वे अपनी लीडरी चलाते है।"

प्रद्युम्न को यह अच्छी तरह मालूम था कि इस सम्बन्ध मे लोग क्या-क्या कहते है। बोला—"डाक्टर साहब, क्या कहा जाय आजकल रोजी मिलना भी राजनीति का दाँव ही सा समझिए। यदि आप अच्छे राजनीतिज्ञ है तो चाहे पास हो या फेल नौकरी आपको मिलेगी ही। यही नही, आपके ऊपर वाले आप से डरेगे भी। पढ-लिख कर तो बेगबारो एण्ड स्टील कम्पनी मे आपको कोई क्लर्की मिल जाय तो

समझिए कि पुरखो के पुण्य का प्रताप प्रबल था। क्लर्की भी निरी टैम्परेरी यानी सामयिक। बीस साल भी नौकरी कर लीजिए पर आप टैम्परेरी ही बने रहेगे जिससे कि आपको हमेशा याद रहे—'नलिनी-दलगत जलमतिरत्न तद्वज्जीवनमतिशयचपलम्।' हमारा बैरा कर्लक से अधिक वेतन पाता है और उसका अच्छा सम्मान भी होता है। आजकल की समस्या तो यह है कि वह मेरे पास काम करेगा या नही, अथवा मै उसको बैरा रखूँगा कि नही। वही हाल ड्राइवर का है। मेरे बुलाने पर वह आयगा या नही, इसका विचार वही कर सकता है, मै नही।"

डाक्टर साहब ने जैसे इन बातो को सुना ही नही। बोले—"वोट तो इन्ही से मिलते है। राजनीति मे यही तो चाल की पक्की गोटियाँ है।"

प्रद्युम्न इस बातचीत से ऊब चुका था। उसे एकाएक स्मरण हो आया कि वह घर कुछ भूल आया है। वह जल्दी से घर लौटा। पीछे से भैया ने आवाज दी—"अरे हाँ, हाँ, यह दिन-दहाडे क्या करते हो? कुछ तो लिहाज रक्खो।"

नेपथ्य से केवल इतना ही सुनायी पडा—"मै अपना फाउन्टेनपैन भूल आया हूँ। अभी आता हूँ।"

रागा भैया की आँखो मे एक दुष्टता-भरी हँसी खेल गई। उन्होने डाक्टर को चुपके-चुपके बताया कि फाउन्टेनपैन तो जेब में ही लगा था, अतएव दो और दो चार। हा! हा! हा!

प्रद्युम्न फौरन ही कुछ निराश-सा होकर लौट आया। समझने मे कुछ दिक्कत नही हुई कि वह स्याही के झरने की तलाश मे नही गया था, बल्कि किसी और झरने की तलाश मे गया था, और वह मिला नही इसलिए वह निराश है।

डाक्टर सहानुभूतिशील स्वभाव के थे। उन्होने प्रसग बदलने के लिए कहा—"हम मध्यवर्ग के हिन्दुओ को कोई नही पूछता। नेता लोग तो जनसाधारण की कसमे खाते रहते है। नेतागण लोगों की आँखे मजदूरो पर, और बहुत हुआ तो किसानो पर सीमित है। पर

हम लोगो का कोई नाम-लेवा और पानी-देवा तक नही है ।"

रागा भैया मध्यवित्त वर्ग के स्वर्ण-युग को देख चुके थे, वे भी व्यथित हुए । बोले—"सालो ने हम लोगो का नाम रक्खा है 'काष्ट हिन्दू' ।"

सुनकर सारगी महाशय एकदम स्ट्रेट हो गये । "काष्ट नही, काष्ठ हिन्दू, यानी हम लोगो को उन्होंने लकडी बना दिया है । ईंधन है तो हमी है, छिलेगे तो हमी, जलेंगे तो हमी, मानो हम मे जान नही है । कुली भी हमसे अधिक कमाता है, और उसे न पढने-लिखने का खर्च उठाना पडता है और न साफ-सुथरे कपडे ही पहनने पडते है । फिर भी आधुनिक साहित्य मे उन्ही के लहसुनिया बदबूदार शरीर की लोरियाँ गायी जाती और उनके लिए सहानुभूति के मारे आँसू की नदियाँ बहायी जाती है । वोल्गा से लेकर गगा तक विश्व-प्रेम की धारा बह रही है, पर उस धारा मे हमारे लिए कही कोई गुजाइश नही है । और इधर लोकतत्र का यह हाल है कि उसके अडे को लेकर पतितुडी की तरह लोग निकलते है ।"

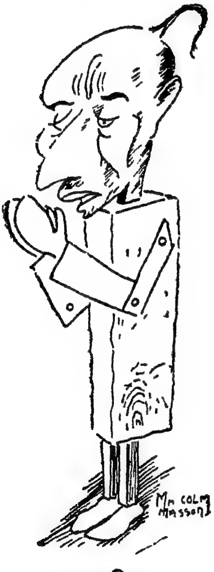

काष्ठ हिन्दू.

प्रद्युम्न बोला—"आप तो बडे परेशान हो रहे है। चलिये एक कप गरम चाय पी लीजिये।" कहकर वह एक दम अप्रत्याशित रूप से भीतर की ओर चला गया ।

वह ऐसे गायब हुआ जैसे गधे के सिर से सीग। रागा भैया थे तो भयकर मजाक करने वाले पर थे दिलदार। डाक्टर को आँख मारते हुए बोले—"जाओ, तुम अपने मरीज को देखो नही तो बहू को खिसकने का मौका नही मिलेगा, और इधर हमारे भाईजान का बुरा हाल हो रहा है ।"

१०

डाक्टर को बात करने का शौक कम नही था। बोला—"आपने भी तो कभी शादी की थी, पर प्रेम से परिचित होने का मौका शायद आपको नही मिला, और हम लोग हमेशा प्रेम मे पडते है पर शादी का मौका नही लगता। और यह देखिये आपके भाईजान है कि शादी भी हुई और प्रेम मे भी फॅस गये। कहिये, रहे न आपसे आगे ?"

रागा भैया ने इस पर आपत्ति की। बोले—"तुम्हारी बात ठीक नही है। हम लोगो ने अपने जमाने मे लाभ और 'लव' दोनो कर लिये।"

"अच्छा-अच्छा," रहस्य की महक पाकर डाक्टर अपने मरीज की बात भूल गया और स्टेथेस्कोप का आलिगन-सा करते हुए खडा हो गया। मानो अपने हृदय की व्यथा की थाह ले रहा हो।

डाक्टर जमते हुए बोला—"अच्छा, उस युग मे भी आप लोग 'जिन खोजा तिन पाइयॉ गहरे पानी पैठ' का अनुसरण करते थे ! डूब-डूब कर पानी पीना खूब चलता था न ? अच्छा यह बताइये प्रेम किससे करते थे ? नथूनी पहने हुई घूँघट वाली से प्रेम भला क्या जमता होगा ?"

हँसकर रागा भैया ने उत्तर दिया—"हमारे प्रेम का सूत्रपात एक अज्ञात आकर्षण से होता था। कली और फूल मे फर्क है—वही फर्क हमारे और तुम्हारे प्रेम मे है। इससे अधिक नही। हॉ, एक फर्क यह भी कह सकते हो कि तुम लोग एकदम प्रेमिका के पितृ-गृह मे पहुँचकर चाय पीते हो, और हम लोग दूर खडे रहते थे कि कब पोखरे से पानी लेने आयेगी, और एक झलक मिल जायेगी। कभी-कभी कटहल के पेड पर चढकर भी बैठ जाते थे। हमे उसी मे सुख मिलता था और तुम लोगो से अधिक।"

डाक्टर आधुनिक बगाल पर लगाये गये इस लाछन को मानने

के लिए तैयार नही थे । बोले—"आपने यह तो देख लिया कि साथ बैठकर चाय पीते है, पर उनमे जो व्यवधान रहता है उसे आपने नही देखा । आप बगला उपन्यास पढिये तो आपको मालूम होगा कि प्रेम क्या वस्तु है । आप जिसे प्रेम समझ रहे है, वह आकर्षण-मात्र है ।"

बहुत प्रयत्न करने के बाद अपने को समझा-बुझा कर रागा भैया ने मान लिया कि हमने अपने जमाने मे जो किया था वह आजकल के प्रेम से भिन्न प्रकार की वस्तु थी । वे दोनो एक आसमान की चिडिया नही हो सकती ।

यह बात चल ही रही थी कि प्रद्युम्न खिला हुआ चेहरा लेकर लौट आया । मानो अमेरिका की खोज करने के बाद कोलम्बस का जहाज लौटकर स्पेन के बन्दरगाह मे लगा हो ।

"डाक्टर साहब, आपकी चाय अभी तक नही आयी ? अरे कौन है, चाय ले आओ !" कहते हुए प्रद्युम्न जिस प्रकार फिर भीतर चला गया—उससे स्पष्ट हो गया कि वह चाय की बात बिल्कुल भूल गया था । फौरन ही लौटकर बोला—"आप दोनो के लिए चाय आ रही है । मै चला, कालिज को देर हो रही है । और हाँ, इस किताब को रखिये, अभी प्रकाशित हुई है, स्त्रियो मे इसका बहुत प्रचार है ।"

रागा भैया चश्मा खोजने लगे । इस बीच मे उन्होने उस पुस्तक को डाक्टर के हाथ मे दे दिया और कहा—"देखो तो यह कौनसी पुस्तक है ?"

डाक्टर ने पुस्तक का एक पृष्ठ खोलकर उसी प्रकार देखा जैसे हलवाई चाशनी मे इशारे से उँगली बोरकर देख लेता है कि गाढी है या पतली । डाक्टर ने देखा कि पुस्तक छपी बहुत सुन्दर है—और उसकी कहानी भी बडी मजेदार है । पुस्तक सेलोफेन कागज मे लिपटी हुई थी । थोडा पढकर डाक्टर एकदम उछल पडे । बोले—"यह उसी ढग की पुस्तक है जिसका जिक्र मै कर रहा था । बिल्कुल हीरे की खान है । जिस पृष्ठ को मै पढ रहा था उससे ज्ञात होता है कि लडकी ने प्रेम जताकर शादी करनी चाही थी—इस पर

लडके,ने जो उत्तर दिया—क्या आप उसे कटहल के पेड पर बैठकर कह सकते है ?"

रागा भैया की आँखे इसी से उज्ज्वल हो गयी । उन्होने कहा—"कटहल के पेड पर चढना इस युग मे चल नही सकता। इस युग मे तो विलायती चैरी या सेव के पेड ही तुम्हे पसन्द आयेगे ।"

डाक्टर साहब बचपन मे बहुत अच्छी मित्रमडली मे पले थे। विचार देशभक्ति के थे। इसलिए दिन मे दस बार छत पर जाकर डड-बैठक लगाया करते थे । यद्यपि थे उन दिनो भी सारगी, तो भी देश का सिपाही बनना था इसलिए साधना चला करती थी । एक दूसरे के बाइसेप्स मसले देखते थे और आसमान की तरफ देखकर कहते थे, 'यही हमारी आजीवन साधना है ।'

साधना मे सिद्धि बहुत जल्दी प्राप्त हो गयी । कुछ दिनो के बाद छत पर किसी का पता नही रहा । बात यह है कि इस बीच मे पता नही कैसे ब्रिटिश सरकार को इन इनकलाब करने वालो का पता लग गया और लडको के अभिभावको पर दबाव डाला जाने लगा । उधर लडके किसी इनकलाबी जुलूस मे अपनी हड्डियो के ढाँचे को लेकर हाफ पैन्ट का झडा बनाकर चल रहे थे ।

डाक्टर किसी तरह ऐसे साधको के दल से छिटक-छिटका कर निकल आये थे । अब जीवन मे रगीनी आने के बावजूद सारगी जीवन कायम था। सूट के अन्दर उनकी दधीचि की हड्डियाँ चर्रमर्र बोला करती थी । शक होता था कि वे अपने सूट के अन्दर बत्तखे छिपाये हुए कही लिये जा रहे है और वे बत्तखे जब-तब बोलती है । डाक्टर साहब उछलकर बोल उठे—"आपको पता है उस छोकरे ने क्या कहा था ? उसने कहा था—हे मेरी अग्निशिखे, ब्याह-व्याह सब घपला है, इसमे अपरिपक्व मन की बू आती है। उसकी मर्यादा भी बहुत पहले ही नष्ट हो चुकी है । नदी-नाले सयोग के कारण ब्याह की खूब चली, और गृह-लक्ष्मियो की भी खूब चली । फिर जमाना मानस-लक्ष्मियों का आ गया। पर वह युग भी ढल गया, अब ब्रेन लक्ष्मी का युग है।"

रागा भैयां की अधेड आँखे चमक उठी । उन्होने कहा—"लड़की

क्या बोली ? सूक्ष्म प्रेम है न ?"

पुस्तक के पृष्ठ उलटते हुए डाक्टर बोले—"यह लडकी बहुत ही अपरिपक्व और नाजुक मालूम होती है । उसने अपने प्रेमी को जिस प्रकार पुकारा उसी से यह जाहिर है । पहले बीच के युग मे भैया कहकर पुकारा जाता था, क्योकि पहले भैया का सम्बन्ध होता था और फिर प्रेम का सम्बन्ध । पर अब यह जमाना और भी आगे बढ गया है । उसने अपने प्रेमी को पत्र लिखा, जिसमे उसे इस प्रकार सम्बोधित किया—हे मेरे सत्यनाश ! जो कुछ भी हो, सत्यानाश ने उसे एक कविता लिख भेजी, जो उसका 'जीवन वेद' है । लडके को

यही हमारी आजीवन साधना है.

अफसोस है कि यह कविता पुराने छद मे लिखी हुई है । पर उसने यह भी लिखा है कि एक नये ढग से लिखी हुई कविता शीघ्र ही भेजेगा ।

रस-हीन गृहकोश मे पडा है,
शेली और बायरन,

इन्टलेक्चुअल प्रेम को नही,
समझ पाये वे मतिमद ।

पर मेरा मन पछी उडान
भरता है दूर की,
वास्तविकता से बहुत दूर,
यह ब्रेन का प्रेम है ।
फिर भी इसकी मार है
भयानक मै मर रहा हूँ,
तुम्हारी स्थूल देह पर नही,
लोभ मुझ मे है ब्रेन का ।

रवीन्द्रीय प्रेम, वह तो है,
दो कौडी का
मेरे सिर की कडाही मे भुनता
रहता है निराकार रूप ।
मेरा ब्रेन विश्व की सब
रमणियो के पैरो मे लोटता है,
मै हूँ कवि, न कि कुये का मेढक ।
मै ऐसे प्रेम मे रहता हूँ,
तल्लीन कि कई बार
रिक्शे भी गुजर जाते है, मुझ पर से ।

पिता करते है गृह मे निरन्तर,
ताडना, पर यह सोचकर
कि कही हो जाऊँ फेल,
सहता सब कुछ हूँ ।
प्रेम है विश्वविजयी,
बस यही है प्रार्थना कि

हर डाक से मिल जाये तुम्हारा,
पत्र ग्रेन-वेव-समन्वित
बस इतनी सी रखना दया हम पर,
नही तो कविता का शील्ड
जीत ले जायेगा कवि
जान 'मेसफील्ड'।"

रागा भैया यह सुनकर चिन्तित हो गये, अवश्य ही उन्हे अपनी स्त्री की बात याद आ गयी होगी, पर इस चिन्ता को दबाकर उन्होने इस घर के दूल्हा और दुलहिन की बात चलायी। बोले—"जैसी हवा बह रही है उससे तो यही मालूम होता है कि पुराने जमाने की एक भी बात नही रहेगी। पर गनीमत है कि अब भी इस घर मे वही पुरानी आबोहवा मौजूद है। सास ने अपनी चॉद-सी बहू को गले से लगा रक्खा है, मानो वह कोई गुडिया हो। और हमारे भाई की सूखे मैदान मे ही ऐसी हालत हो रही है, मानो वह मँझधार मे डूब रहा हो। तुम इस पुस्तक की अग्निशिखा और सत्यानाश वाली हवा इस घर मे बहा दो तो अच्छा रहे। क्या यहाँ तुम बालीगज की आबो-हवा पैदा कर सकते हो?"

डाक्टर गम्भीर होकर बोले—"आप इन झगडो मे न पडे। घर की मालकिन दोनो के बीच मे चाहे जितनी बडी दीवार कर दं, मुझे विश्वास है कि प्रद्युम्न उसमे कही न कही सेध फोड ही लेगा। मुझे तो आप ही के लिए कुछ चिन्ता होती है।"

"मेरे लिए चिन्ता क्या? मतलब? मतलब?"—रागा भैया ने नाक पर से चश्मा उतार लिया और आश्चर्य के साथ देखने लगे।

"जी हॉ, आप ही के लिए चिन्ता हो रही है। आपकी जवानी ढल गयी, पर क्या हुआ। तलवार पुरानी हुई तो क्या, काट तो वही है! बुड्ढे हुए तो क्या, ठाठ तो वही है! आपको तो कुछ हानि नही हुई। प्रेम को तो मन की उम्र से नापा जाता है। आपने अब तक किसी से प्रेम नही किया पर ऑख लडने मे देर क्या लगती है?

कसूर आॅखो का होगा और छुरियाॅ चलेगी दिल पर। जरा आॅख-कान खोलकर रखिये, फिर न मालूम किस वेष मे । इस विराट कलकत्ता शहर मे नित्य-प्रति लोग क्या से क्या हो रहे है ! बस, सजग रहिये। न मालूम कब प्रेम आकर आपके दरवाजे पर ठक-ठक करने लगे।"

देर हो रही थी, इसलिए ननी डाक्टर भीतर चले गये। पर रागा भैया सिर पर हाथ रखकर बैठ गये। सचमुच उनका जीवन व्यर्थ गया। ओह प्रेम का नाम सुनते ही रोमाच हो आता है। इसमे कितना रोमास है, पर किसके साथ प्रेम करूँ ? मेरी राधा कौन है ? अपनी प्रौढा पत्नी को कभी राधा-रूप मे देखा नही। इन बातो को सोचते हुए रागा भैया ने डर और लज्जा के मारे जगले का पर्दा खीच लिया।

परन्तु रिक्शा किधर है ? कलकत्ते का वातावरण प्रेम के लिए उपयुक्त होता जा रहा है। तपेदिक और मोतीझरा की तरह प्रेम

के कीटाणु भी आबोहवा मे हर समय फिरते रहते है, यहाँ तक कि ट्रामो पर भी नोटिस लगे रहते है—'प्रेम और पाकेटमारो से होशियार'। ऐसे वातावरण मे भला प्रेम से कौन बच सकता था ?

११

एक दिन रागा भैया धीरे-धीरे ऊपर के तल्ले मे सीधे प्रद्युम्न के कमरे मे पहुँच गये।

रागा भैया को इसके लिए किसी परमिट की आवश्यकता नहीं है। बात यह है कि वे रागा भैया है। घर के आदमी जो ठहरे! साक्षात् नातेदार!

वे जिन बातो को मजाक मे कह जाते है, उनकी चौथाई भी कोई कहे तो लेने के देने पड जायँ मानो महाभारत ही अशुद्ध हो जाय।

रागा भैया ने देखा कि प्रद्युम्न चुपचाप कमरे के एक कोने मे बैठकर एक पुस्तक के पन्ने उलट रहा है। सवेरे उनका किस प्रकार की पुस्तक से साबिका पडा था, यह वह नही भूले थे। इसलिए उन्होने मान लिया कि यह भी कोई प्रेम-व्रेम सम्बन्धी पुस्तक होगी।

वे जरा मुस्कराते हुए आगे बढे, बोले—"क्यो भैया, क्या इसमे भी प्रेम और रूप की बाते है?"

जल्दी से सम्हलकर प्रद्युम्न बोला—"नही, नही, ऐसी कोई बात नही। प्रेम और रूप के अलावा ससार मे और भी बहुत सी बाते है।"

गज पर हाथ फेरते-फेरते दादाजी दु ख के लहजे मे बोले—"हम लोग किस प्रकार ठगे गये यह अब मालूम हो रहा है, हमारे जमाने मे ये बाते ? नही थी।"

"कौनसी बाते ?" जरा बताइये तो!"

दादाजी हँसकर बोले—"कहूँ ? अच्छा तो सुनो, अब ऐसा मालूम होता है कि सारा कलकत्ता प्रेम मे पडने के लिए अकुला रहा है। प्रेम के कीटाणु भी टी बी और टाइफायड की तरह सर्वत्र मँडरा रहे है।"

प्रद्युम्न ऐसा बन गया मानो यह बात उसके लिए बिल्कुल ही नयी हो।

दादाजी कहते गये—"यकीन नही आता ? असली बात यो है कि कलकत्ते के लोग प्रेम भले ही करे पर वे प्रेम करने के साथ प्रेम करते है। नही तो आधुनिकता मे बट्टा जो लगता है।"

"तो एक ही शाम मे आपकी जानकारी इतनी बढ गई ! 'एकदम अग्निवाण है' क्या कवीन्द्र रवीन्द्र ने आपके लिए ही वह गीत लिखा था ?"

"अच्छा, अच्छा, यह बात !"—कहकर दादाजी फूले न समाये। "तुम्हारे कवीन्द्र जी ने अग्निवाण पर सिर क्यो खपाया ये तो वे ही जानते है। पर मै तो देख रहा हूँ कि इस युग मे बिना शादी किये भी प्रेम किया जा सकता है। यह बडी सुविधा की बात है। तुम्हारे अग्निवाण मे आँच कुछ-कुछ है, पर जलन नही। पुष्पसार मे महज शहद है, काँटा नही। तुम लोग बडे मजे मे हो।"

कहकर दादाजी ने प्रद्युम्न के कानो के पास मुँह सटाते हुए कहा—"आज मोटर मे सवार होकर दोनो लेक के किनारे जाओ न। एक चक्कर काट आओ, कबूतर और कबूतरी की तरह। अहा !"

फिर भावुकता मे विभोर होकर दादाजी बोले—"पिजरे का पछी जगल मे घूम रहा है, यह सोचकर भी खुशी होती है।"

प्रद्युम्न ने शरारत-भरी हँसी हँसते हुए कहा—"पर मालूम तो ऐसा होता है कि सुख आपका ही है।"

दादाजी खुशी से फूलकर कुप्पा होते हुए बोले—"तुम लोगो का सुख सोचकर ही मुझे सुख होता है, मूलधन के मालिक तो तुम हो, पर सूद का आनन्द भी कुछ कम नही है। वह मेरा है।"

प्रद्युम्न अजीब-सा मुँह बनाकर कुछ सोचने लगा।

पर दादाजी तैयार होकर आये थे, बोले—"बात यह है न कि माँ से कहते हुए झिझक रहे हो। पर उन्हे बताने की जरूरत ही क्या है ? यदि परिस्थिति ऐसी-वैसी पड जाय तो माँ से मोर्चा लेने के लिए मै हूँ। सब कुछ समझा लूँगा। तुम निश्चिन्त रहो। स्कूल

के सामने जो कचालूवाला बैठता है, वह जैसे अपने रसो की पेटी मे खटाई का रस रखता है जिससे वह ग्राहक की जीभ को समझाता है, वैसे ही जरूरत पडने पर मै तीखा, कडवा, खट्टा सब रसो से तुम्हारी माता जी को समझा सकता हूँ।"

"आपकी बात पूरी-पूरी पल्ले तो नही पडी, पर यह समझ गया कि एक उपन्यास पढकर ही आपकी बातचीत मे काफी रगीनी आ गयी है। खैरियत यह है कि अभी आपने रबड छन्द की रचनाये नही पढी, नही तो पता नही क्या उत्पात मचाते ?"

"यह न कहो भैया ! मैने उन्हे पढा भले ही न हो पर गुना है, जिस प्रकार लिफाफा बिना खोले ही खत का मजमून भॉप लिया जाता है। मौका पडने पर मै उन्हे ऐसे समझा लूँगा कि सॉप भी मरे और लाठी भी न टूटे। वे समझ ही नही पायेगी कि उनके हिस्से मे छाछ आ रही है या मक्खन, बस वह मेरा बिलोना ही देखती रह जायेगी। अन्त तक वह तुम दोनो के इस दिन-दहाडे अभिसार के मामले को मुझ पर छोडकर सोने के लिए चल देगी।"

प्रद्युम्न को इससे कोई विशेष हिम्मत नही बॅधी, बोला—"पर अगले दिन सवेरे क्या माजरा रहेगा ?"

"अगले दिन सवेरे ?"—दादाजी ने आश्चर्य से पूछा। "सवेरा आयेगा ही क्यो ? एक दम दिन चढ आयेगा। मॉ होगी पूजा के कमरे मे और तुम होगे गुसलखाने मे। वे होगी भडार मे और तुम होगे कालिज मे। फिर झमेला काहे का ?"

फिर भी प्रद्युम्न कुछ आश्वस्त नही हुआ, बोला—"बकरे की मॉ कब तक खैर मनायेगी ? एक न एक समय मॉ का सामना होगा ही।"

"हॉ, हॉ सामना तो होगा। पर तुमने कभी न कभी सिनेमा तो देखा ही होगा। कम से कम नाटक तो देखा ही होगा। सीना फुला - कर नाटकीय ढग से कह नही सकते कि सारी गलती दादाजी की और उस राड मोटर की है।"

"मोटर की ?"

"इसमे आश्चर्य क्या है ? यदि मोटर तुम्हे फूफाजी के या

मौसाजी के घर के बजाय लेक के किनारे ले जाय, तो इसमे दोष किसका है ?"

"नही दादाजी, आपकी योजना ठीक नही है। नाटको मे यह सब भले ही चले, पर माँ के निकट चाल नही चल सकती।"

दादाजी बोले—"यह भी कोई बात हुई! सिनेमाघरो के सामने टिकट खरीदने वालो की लम्बी कतारे लगी रहती है। टिकट पाने के लिए पूरी तपस्या और साधना करनी पडती है। टिकट मिल गये तो पहले दाखिल होने के लिए लोग कितनी वीरता दिखलाते है। यदि मुल्क आजाद हो तो इन्ही मे से आजाद भारत के सिपाही भर्ती किये जायँ तो बस सारा काम बन जायगा।"

"यह सब तो हुआ, पर इससे मेरा क्या बनता-बिगडता है ?"

अब दादाजी कुछ कडवे स्वर मे बोले—"प्रेम-व्रेम तुम्हारे वश की बात नही है। अभी उस दिन की बात है कुछ नौजवान सिनेमा-घर से निकल रहे थे। वे आपस मे कह रहे थे कि जीवन का रहस्य नायक-नायिका का अभिनय देखकर ही समझ गये थे! उनकी तरह हमे भी कवीन्द्र की भाषा मे कहना है कि मेरा प्रेम न तो भीरु है और न कमजोर।

प्रद्युम्न मुस्कराकर बोला—"दादाजी, तुम्हारा तो सत्यानाश हो चुका है।"

दादाजी हार मानने वाले जीव नही थे। खुशी से उछलकर बोले—"हाँ मेरी पाँचो उँगली घी मे रहती है, पर शुरू मे सिर कढाई मे ही रहता है "

बातचीत चल ही रही थी कि मोक्षदा गला खखारती हुई आ पहुँची बोली—"कौन है चाचा जी ?"

दादाजी चौक पडे। जल्दी से चश्मे को खीचकर नाक के बीच मे कर लिया, मानो भाँप रहे हो कि परिस्थिति क्या है। साथ ही स्मरण हो आया कि वे अभी-अभी प्रद्युम्न को साहसी बनने की सीख दे रहे थे। बोले—"अभी उधर माँ और बेटे मे कुछ बातचीत हो रही थी, उसी का जिकर था।"

मोक्षदा बैठ गई। दादाजी को कुछ हिम्मत हुई। वे माँ-बेटे की काल्पनिक बातचीत सुनाने लगे, मानो लडके का कोर्टमार्शल शरू हुआ—

माँ—"क्यो बेटा, तुम्हे क्या हो गया है?"

"कुछ भी तो नही हुआ माँ, अब की बार पास जरूर हो जाऊँगा।"

माँ—"मै पास होने की बात थोडे ही कह रही हूँ। पास होना तो तकदीरी बात है, तकदीर मे होगा तो हो ही जाओगे। मै तुम्हारी निजी बात पूछ रही हूँ। तुम्हारे तकिये और बिस्तरे का क्या हाल हो रहा है? क्या आजकल सोते नही हो?"

"क्यो नही सोता हूँ। मेरा बिस्तरा तो साल भर से लगा ही है। जब नये साल मे घर की पुताई होती है, तब शायद फिर से बिछता है। मुझे क्या? चादर, तौलिया, गिल्लाफ बदल गया तो अच्छी बात है, नही बदला तो भी कोई बात नही। मेरा ऐसा सोभाग्य कहाँ कि रोज बिस्तरा बिछाया जाय और कमरा भी साफ हो। खैरियत यह है कि कमरे मे फैन है, नही तो हाथ वाला पखा चलाना पडता तो मालूम होता। रहा सोना—सो मेरा सोना और जागना सब बराबर है। घर और बाहर दोनो मेरे लिए बराबर है। 'जैसे कता घर रहे तैसे रहे विदेस।' शालिग्राम शिला का सोना और बैठना एक-सा ही है।"

माँ—"अच्छा, नोद नही आती तो सिर पर जरा भैया की तरह जवाकुसुम तेल लगा लिया करो। उससे सिर ठडा रहेगा। इसके अलावा अच्छी तरह स्नान किया करो।"

"नहाना तो है ही, जिन्दगी मे और धरा भी क्या है? घर का नल मेरे लिए खाली कौन करे? इसलिए जब जी मे आता है, तो मुँह-अँधेरे ही म्युनिसिपैलिटी के नल के नीचे जाकर 'नटराज-नृत्य' कर आता हूँ।"

माँ—"नटराज-नृत्य क्या बला है?"

"इसे 'ओरियन्टल डान्स' भी कहते है। सब के नसीब मे इसका चास नही आता। इसके अलावा नृत्य करना भी बहुत कठिन है। बात यह है कि यह चतुष्पदी है। पहले लोग यह जानते थे कि नृत्य द्विपदी होता है और विवाह सप्तपदी होता है, पर आधुनिक युग का यह नृत्य

चतुष्पदी है, क्योकि इसमे हाथ-पैर दोनो चलाये जाते है। और विवाह को तो मैने परस्मैपदी-रूप मे ही देखा है।"

म्युनिसिपेलिटी के नल के नीचे जाकर 'नटराज-नृत्य' कर आता हूँ

माँ—"अच्छा यह सब तो हुआ। अब मसखरापन छोड, और यह बता कि अच्छी तरह खाना-पीना क्यो नही खाता? बहू कह रही थी कि तू कभी खाता है और कभी नही खाता। यह क्या बात है?"

"जैसे तुम्हारी बहूजी सच्ची खबर ही रखती हो! मेरा खाना तो ऐसा है जैसे महाराज का फुटबॉल खेलना।"

माँ—"क्यो इसमे महाराज का क्या काम है?"

"क्यो, वे ही तो सब कुछ करते है। जब कालिज का वक्त होता

है तो मै चिल्लाता हूँ—'महाराज ! खाना लाओ ।' इस पर महाराज थाली पर चावल का फुटबॉल बना देते है, फिर उस पर जरा दाल छिडक

मेरा खाना तो ऐसा है जैसे महाराज का फुटबॉल खेलना.

देते है, जिससे मालूम पडे कि मामूली फुहार हो गयी है । फिर थाली को पेनल्टी किक लगाकर मेरे सामने रवाना कर देते है। खाऊँ तो वाह वाह, न खाऊँ तो महाराज की बला से ! यह 'थ्री चियर्स फॉर कटक बगान' फुटबॉल खेलना नही तो क्या है ? फुटबॉल ही नहीं यह तो मेरी जान से भी खेलना है ।

मोक्षदा ने बहुत सहन किया, बोली—"तो चाचा, तुम दादा और पोते मिलकर यही सब पर-चर्चा किया करते हो ।"

दादाजी भडक गये । सवेरे ब्रेन के द्वारा प्रेम-नामक पुस्तक के कारण आत्म-चर्चा करने पर पकडे गये थे, और अब यह आफत आयी ।

प्रतिवाद करते हुए बोले—"नही, नही, जिस घर मे तुम्हारी तरह सुगृहिणी नही है, उस घर को मै घर ही नही मानता। और फिर उस घर और धावे मे फर्क ही क्या है ?"

कहकर दादाजी सटक गये। जाते समय जैसे प्रद्युम्न को कह गये—"कभी मोहनबागान के लोग थे खिलाडी। उनका कोई मुकाबला कर सकता है तो बस उडिया महाराज। उनके रसोईघर के खेल ने सारे कलकत्ते को सिर पर चढा रखा है।"

इतनी देर मे मोक्षदा को ख्याल आया कि वह यहाँ से हटेगी तभी सुरधुनि को यहाँ आने का मौका मिलेगा। इसलिए वह धीरे से उठ गयी। जाते समय अपने हाथो से जगले के पर्दे भी खीच गयी।

तनिक देर बाद ही सुरधुनि वहाँ आ गयी। उसकी आँखे कडवा रही थी। जम्हाई लेते-लेते किसी प्रकार सोने के लिए तैयार हुई। वह गिडगिडाती हुई बोली—"अजीब बात है, तुम लोगो मे से किसी को नीद नही आती क्या ?"

प्रद्युम्न फौरन ताड गया। हवा को कुछ हल्का करने के लिए बोला—"मेरा प्रेम भीरू या कमजोर नही है ?"

"भला इसके क्या माने हुए ? क्या आप इतने बड़े प्रेमी है कि आपको नीद की जरूरत ही नही होती ?"

हँसकर प्रद्युम्न बोला—"देखो, मै इस युग का नाइट हूँ, और तुम मेरी प्रिया हो। मेरा कहना है नीद ? नीद क्या बला है ? नीद तो उन लोगो के लिए है जो प्रेम नही करते। मै तो बस डटा रहूँगा। केवल आँखो की पँखुडियाँ ही नही सारी पृथ्वी को तुम्हारे पैरो के नीचे बिछा दूँगा।"

सुरधुनि सिर हिलाने लगी मानो वह इस प्रकार प्रद्युम्न के प्रेम की थाह ले रही हो।

इस पर वह ढीठ नायिका-सी बोली—"तुमने इसमे कौनसी नयी बात कही। मेरे पैरो-तले तो पृथ्वी यो ही मौजूद है। रहा तुम्हारा हृदय, सो आजकल उसका कोई मूल्य नही है। माँग और पूर्ति के नियम के अनुसार उसका मूल्य बहुत घट गया है। तुम्हे जिस चीज

की जरूरत है, वह है एक घर।"

आधुनिका से इस प्रकार अर्थशास्त्र की बाते सुनकर आधुनिक नाइट ने अनर्थ की सूचना देखी। फिर भी तुर्की व तुर्की बोला—"पर प्रेम तो किराये के मकान मे भी किया जा सकता है। प्रेम मे वह शक्ति है कि बालू मे भी फूल खिला सकता है।"

सुरधुनि इतनी बुद्धू नही थी, बोली—"बालू मे तो फूल के पौधे नही पनपते, काँटो के झखाड ही पैदा होते है, इसके अलावा तुम्हारा कोई अलग माहवारी भत्ता भी नही है।"

प्रद्युम्न ने सीने पर हाथ रखते हुए कहा—"प्रेम वह शक्ति है कि महीने के दिन यो ही निकलते चले जायेगे। जो प्रेम मे इतनी भी शक्ति नही हुई तो फिर क्या हुआ ?

"हाय कवियो ने प्रेमिको को केवल इतना ही कहकर सावधान किया कि कुसुम मे कीट होते है, कमल के नीचे काँटे रहते है, पर कुसुम पत्थर का बना हो सकता है यह बात किसी काव्य मे लिखी नही है।"

सुरधुनि मुस्कराकर बोली—"अच्छी बात याद आयी। समय जल्दी-जल्दी निकालने के लिए अपने को एक अलग मोटर की भी जरूरत है।"

प्रद्युम्न सारी बात समझ गया। दादाजी के सहृदय मन का स्पर्श सुरधुनि को भी लग चुका था। पर माताजी टस से मस नही होती।

प्रद्युम्न चाहे जिस परिवार या खानदान का हो, था वह नौजवान ही। आधुनिक आबोहवा और बाह्य जगत की स्वतन्त्रता की लहरें उसके मन को भी छू छू जाती थी। चारो तरफ के लोग परस्पर खुलकर स्वतन्त्र रूप से मिलते थे। पर प्रद्युम्न के घर की आबोहवा अजीब थी। वहाँ जो कुछ भी होता था सब गुप्त रूप से छिप-छिप कर। पति-पत्नी का नवीन प्रेम फाल्गुन की धारा की तरह गुप्त रहे—बाहर प्रकाशित न हो।

मोक्षदासुन्दरी के राज्य मे श्रृङ्गार रस को एक कमरे मे निर्वासित कर दिया था, या यो कहिये कि घूँघट लगाकर ही वह फिरकैयाँ ले सकता था। कवीन्द्र रवीन्द्र के उपन्यास 'शेष कविता' के नायक अमित और नायिका केतकी की तरह नैनीताल मे केवल दोनो का मधुचन्द्र सम्भव न होगा। यदि पूजा की छुट्टी मे कही बाहर जाना हो तो उसमे भी कोई रस नही मिलेगा। हाँ, पुरी या देवघर चला जाय तो तीर्थ-यात्रा के बहाने आम के आम और गुठलियो के दाम मिलना सम्भव हो जायगा। पर उन स्थानो मे भी युगल-विहार की कोई सम्भावना नही है।

प्राय समझा जाता है कि बहू घर का सामान है और मालकिन की निजी सम्पत्ति है। लडके के साथ उसकी शादी जरूर हुई है, पर वह पहले सास की बहू है ओर फिर पति की पत्नी। इसलिए कलकत्ते के बाहर जाना भी बेकार था। सध्या के समय भी बहू को सास से छुट्टी मिलती हो, सो बात नही। दिन तो दुपहर मे आँख लगने के साथ-साथ समाप्त हो जाता है। सध्या-समय लालटेनो का जुलूस निकलता है। यह क्या बला है ? जरा सुन लीजिये। प्रेम किस मार्ग से प्रवेश करे ? मोक्षदासुन्दरी आगे-आगे रहती है, बगल मे नयी बहू और फूफी की लडकी आदि रहती है, ऐन पीछे पान खैनी आदि

डिब्बो को लिये हुए दाँतो मे मिस्सी लगाये नौकरानियो की पलटन रहती है और उनके पीछे लाठी और लालटैन लिये हुए दरबान। भला इस भयकर व्यूह मे प्रेम किस मार्ग से प्रवेश करे ?

प्रेम किस मार्ग से प्रवेश करे

मोटी-सी बात यह है कि इस घर मे यौवन की अठखेलियो के लिए कोई स्थान नही था। कवियो ने तो और भी शामत ढाई है। कवीन्द्र रवीन्द्र का यह गीत प्रद्युम्न जानता था।

"सबुज सायरे सागर किनारे
देखेछि पथे जैते तुलना-हीनारे"

याने नील समुद्र मे और समुद्र के किनारे मैने उस अतुलनीया को राह चलते देखा है। इस कविता के साथ-साथ प्रद्युम्न के मन मे डैफोडिल फूल से छाये हुए इग्लैण्ड के स्निग्ध हरे मैदानो के रग की साडी बसी हुई थी। उसका महीन किनारा सुरधुनि के गोरे बदन को घेरकर उसे वन-लक्ष्मी का रूप देगा। वह उस समय उसे शकुन्तला कहकर पुकारेगा। उसकी केशराशि नितम्ब तक पहुँचेगी और इस प्रकार देह-भगिमा के लिए एक पृष्ठभूमि तैयार होगी। बाहुलता मे कोई भी गहना नही रहेगा। हाँ, एक हाथ की पौची मे सोने की पतली-सी चूडी रहेगी, जिससे व्यग्रवाहु के इगित को रूपान्वित होने मे सहायता मिले। दूसरे हाथ की कलाई मे मणि-माणिक्य-मडित एक घडी रहेगी। न रहे तो भी कोई हर्ज नही, क्योकि समय गतिहीन होकर सध्या के आँचल मे अटक जाय तो अच्छी बात है। चेहरे पर कोई अलकार नही रहेगा। हाँ, दोनो कानो मे चुन्नी के दो कर्णफूल रहेगे, मानो कानो मे जो कुछ कहा गया है, उसके वे नीरव गवाह हो। पैरो मे भी जो रहेगा वह केवल चरण-कमल ही रहेगा। उसमे किसी नूपुर की आवश्यकता नही होगी। किसी दूसरे को जताना थोडे ही है और अपने हृदय मे तो हर समय वही नूपुर बज रहे है। ठीक ही उसका नाम है सुरधुनि। वह हृदय मे तरगित हो बहती रहती है।

प्रथम मिलन के सम्बन्ध मे यह था उसका स्वप्न। पर जिस रूप मे वह वस्तुत सामने आया उसे वह कभी भुला नही सकता। सुन्दर सजे हुए घर के चारो तरफ लोग छिप-छिप कर वर और वधू को देख रहे थे। सभी उत्सुक थे कि नवजीवन नृत्य की प्रथम नूपुर ध्वनि को सुने। दूसरे दम्पत्ति सोचते कि शायद इस प्रकार चोरी से जीवन की नवलीला देखने पर उनके अपने जीवनो मे तरग-गति कुछ द्रुत हो जाय। यह सब नव दम्पत्ति के लिए अत्यन्त असुविधाजनक था।

इन सब बातों को सोचते हुए भी लज्जा के मारे बुरा हाल

होता है। पर मानना ही पडेगा कि इस ससार मे सभी कवि है। जो नही है वे भी एक रात के लिए स्पर्श-मणि के स्पर्श से कवि हो जाते है। और प्रद्युम्न के सामने तो ससार का समस्त प्रेम-साहित्य-भडार खुला हुआ था। वह बार-बार उन्मना होकर सृष्टि के प्रथम युग मे लौट गया था। जिस परम विस्मय से प्रथम नर ने प्रथम नारी को देखा था वही विस्मय उसकी आँखो मे था। मानो विश्व-नारी काल के स्रोत मे तिरते-तिरते उसी के लिए विशेष रूप से नववधू का रूप धरकर आयी हो। उसके मन मे यह भी आया कि अनन्तकाल से महादेव के लिए जो उमा तपस्या कर रही है यह उमा वही है, और वह स्वय है महादेव।

उस समय सध्या की धारा आकर रात्रि की महाधारा मे घुल-मिल रही थी। बचपन मे उसे जल्दी सोने का अभ्यास था। पर आज इस जागरण मे कितना आनन्द था! जीवन की नदी मे आज जल-धारा नीचे की ओर न जाकर ऊपर की ओर जा रही थी। क्या अब से सब राते इतनी ही मधुमय हुआ करेगी? क्या अब से उसकी राते उसके दिनो को घेरकर स्वप्न-रचना करती रहेगी?

दिन भर उसने अपनी दुलहिन को कल्पना मे फूल की मालाओ से सजाया था। अन्धकार की विपुल आशा मे जो नक्षत्र रतजगा कर रहे थे उनकी तरफ ताककर वह मानो जन्म-जन्मान्तर से उसी की बात सोचता आया था। पर आज तो कल्पना की वह देवी रूप धरकर साक्षात् सामने प्रगट होने वाली थी। आज तो वह सहस्र सूर्यो की दीप्ति लेकर आविर्भूत हो रही थी। पर प्रतीक्षा करते-करते रात ढलने लगी। ऐसे समय उसने मन ही मन कविता की शरण ली। नीहार की लिखी हुई वह कविता उसके सरनस नेत्रो के सामने कौध गयी, जिसका मतलब कुछ ऐसा था कि दिवस के अवसान के समय मै तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा हूँ, उधर पश्चिम गगन मे सूर्य सुनहरी आभा फैला-कर पूर्व दिशा तक लम्बी छाया से पुल-सा बनाकर किसी के जाने और किसी के आने की बात कह रहा है। सध्या के समय चारो तरफ शाति बिराजती है, पर मन मे वह शाति व्याप्त नही होती,

बल्कि एक तडपन, यहाँ तक कि घुटन पैदा होती है। रात्रि धीरे-धीरे चूकर समाप्त हो जाती है, और इस प्रकार सध्या से लेकर उषा काल तक प्रतीक्षा ही रहती है।

पर कविता ने भी अधिक सहायता नही की। बल्कि अपनी दुर्दशा की उससे और अधिक अनुभूति हुई। अन्त को जब वह आयी तो इस प्रकार से आयी कि वह वन-लक्ष्मी तो क्या, वन जरूर मालूम होती थी। पुराने ढग के गहनो इत्यादि के मारे बल खाते हुए बाल दिखायी नही पड रहे थे। और चेहरा! वह भी मुश्किल से दिखायी पडता था। बनारसी साडी और तरह-तरह के अलकार, यही सब सामने आ रहे थे। इनके कारण नर और नारी पीछे रह गये थे। उसे आशा थी कि उधर से भी मिलन की व्याकुलता होगी, पर सामने जो कुछ दिखायी पडा वह था हीरे-मोतियो से जडा हुआ, सुनहली साडी मे लिपटा हुआ कमल का फूल। प्रेम की गुजाइश इसमे कहाँ थी? ऐसा मालूम होता था कि यह कीमती साडी और गहनो का एक जगल है। कालिदास ने जो वर्णन लिखा है–"आवर्जिता किंचिदिव स्तनाभ्या वासो वसाना तरुणार्करागम्"। यह उसी का रूप था जो पेड़ पर लागू होता था। यह सचारिणी पल्लविनी लता का रूप नही था। यह स्त्री हो सकती है, पर प्रिया नही। यह मानसी तो नही है ही, पर मानवी भी पूरी नही है।

क्या प्रेम कभी मापा जा सकता है ?

हाँ, प्रेम कितना विशुद्ध, गहरा या उच्छ्वासमय है, इसकी धारणा बनाना सम्भव है। पर कवि इससे इन्कार करते है। किसी-किसी कवि ने इसके लिए यह पेशबन्दी कर रक्खी है कि अपने ही मन तक को जाना या पहिचाना नही जा सकता। यदि यह बात मान ली जाय तो सारी समस्या का ही बटाढार हो जाता है। अब तो वह जमाना है कि हर चीज के लिए लाइसेन्स और परमिट की जरूरत होती है, पर अपने मन पर किसी ने कभी नियन्त्रण नही किया। प्रेम करने अथवा उसमे फँसने के लिए किसी परमिट की आवश्यकता नही है। वहाँ सब बेहिसाब है, वहाँ परमिट देनेवाला ही क्या करेगा? झख मारेगा।

पर प्रेम गज से नापा जा सकता है। यह कैसे ? यह पहले पता नही था, पर अभी हाल मे सन्थाल परगने मे देखा कि सभी लोग इस विषय मे आलोचना कर रहे है। सबसे मेरा मतलब उन लोगो से है, जो प्रेम मे नही पडे, यानी जो अविवाहित तरुण है। प्रेम के ससार मे वे ही सफल रहते है, क्योकि उन्ही के कल-कूजन से प्रेम अभी तक इस ससार मे टिका हुआ है। जो लोग प्रेमसागर मे डूबकर लुप्त हो गये है, उनसे भला क्या आशा ?

विवाह के बाद प्रद्युम्न और सुरधुनि सन्थान परगना गये थे। पर इसे हनीमून कहना उचित न होगा, क्योकि प्रद्युम्न जिस घराने का लडका था, किसी लड़की की शादी उस घराने के लडके के साथ नही होती थी, सारे परिवार के साथ होती थी। इसी कारण सुरधुनि जब परिवार के सब लोगो का ऋण चुका लेती थी यानी सास की बहू, ननद की भौजाई, देवर की भाभी आदि हो चुकती थी, तभी वह रात्रि के लम्बे घूँघट की आड मे, और सो भी नीद की गोद से

पतित होकर, पति की पत्नी बनती थी ।

इतनी दूर आने पर भी बहू को सास से मुक्ति नही मिली । बात यह है कि सास यह चाहती थी, और केवल चाहकर ही वह चुप होनेवाली नही थी, वह देखती भी थी, कि बहू सब धर्म-कर्मो मे शामिल हो, दूसरे शब्दो मे वह अपने साथ-साथ उसे मन्दिरो में लिये-लिये फिरती थी । वैद्यनाथ एक छोटा-मोटा तीर्थ-स्थान है, इसलिए धर्म-कर्मो के लिए विशेष मौका था । पता नही जिन लोगो ने तीर्थ-यात्रा की पद्धति चलायी उनके मन मे यह बात कहाँ तक थी कि उनके अनुयायी तीर्थ-यात्रा के बहाने देश-विदेश घूमे और नये-नये

लडकी की शादी सारे परिवार के साथ होती है.

दृश्यो का आनन्द उठाएँ । भले ही गौण रूप से यह उद्देश्य कुछ सिद्ध हुआ हो, मोक्षदासुन्दरी के क्षेत्र मे यह उद्देश्य करीब-करीब व्यर्थ हो

गया था ।

फिर भी जिसको ईश्वर देता है, उसको छप्पर फाडकर देता है । एक दिन सन्ध्या-समय मोक्षदासुन्दरी एक मन्दिर से निकल रही थी तो एक पुरानी सहेली से उनको भेट हो गई । उस सहेली के साथ मोक्षदासुन्दरी का गगाजल का सम्बन्ध था यानी दोनो एक दूसरे को गगाजल कहकर पुकारती थी ।

गगाजल के साथ जो बातचीत होती थी, वह सारी की सारी ऐसी नही थी जो नयी बहू के सामने की जा सके । इसलिए थोडी देर बाद उन्होने अपनी बहू से कहा कि वह लडके के साथ घर लौट जाय । सुरधुनि बिल्कुल अवाक् रह गई । ऐसी अशास्त्रीय घटना या कह लीजिए दुर्घटना कभी इस खानदान मे हो सकती है, इसकी कल्पना पहले नही की जा सकती थी । वह लज्जित होकर एक बार सास की तरफ देखने लगी, फिर पति की तरफ ऐसे देखती रही मानो उससे कहा गया हो कि वह किसी पर-पुरुष के साथ चली जाय । एक अजीब परिस्थिति थी ।

प्रद्युम्न ने ऐसा दिखलाया मानो उससे इन बातो का कोई सरोकार ही न हो । इस प्रकार के सौभाग्य पर विश्वास करना कठिन था पर प्रतापशालिनी माँ की ओर देखने की वह हिम्मत नही कर रहा था, क्योकि जो हुक्म दिया जा चुका था, उसे वापस लेते कितनी देर लगती है ।

प्रद्युम्न तो माँ की सहेली की ओर भी नही ताक रहा था, क्योकि उधर से यह भी तो कहा जा सकता था—'अपनी चाँद-सी बहू को आज मै अपने यहाँ ले चलूँगी । चलो, आज मेरे यहाँ चलो ।'

कुछ भी हो, विपत्ति की घडी टल गई । दोनो अधेड स्त्रियाँ अतीत की मित्रता से विचलित होकर आपस मे कुछ बक-बक करती हुई बाजार के रास्ते से चली गयी । शायद जाते-जाते कुछ बर्तन भी खरीदने थे ।

इस बीच मे नवदम्पति चाहे लज्जा से कहिये या मौका कही निकल न जाय, इसलिए जल्दी भीड मे खो गये । साथ के दरबान

मिसिरजी भी मौका देखकर खिसक गये । इस ससार मे प्रेम के मार्ग मे जैसे काँटे है, वैसे ही अप्रत्याशित स्थानो से सहानुभूति भी मिलती है ।

स्टेशन के पास ही घूमकर वे मैदान मे उतर पडे । उद्देश्य समझना कुछ कठिन नही है। मार्ग से कुमार्ग ही प्रेम के लिए सुविधाजनक रहता है । जनता के बजाय निर्जनता ही इस मार्ग मे काम आती है ।

पर यहाँ आकर भी कोई मौका अच्छा नही मालूम हुआ । बहुत से नवयुवक यहाँ मारे-मारे फिर रहे थे । उन्हे देखकर यह समझ मे आता था कि वे ससार के जितने भी विषय है, उन सब पर आलोचना करते है । प्रद्युम्न ने जरा दबी आवाज मे सुरधुनि से कहा, "आओ जरा साथ-साथ टहले और बातचीत करे ।"

सुरधुनि बहुत नाराज थी । अब तक वह पति के पीछे-पीछे किसी तरह घिसटती चली आ रही थी । बाहर निकलकर भी यदि नवविवाहित मन ही मन फूफी और मौसी के डर का अनुभव करे, तो उन लोगो को बालिग ही नही होना चाहिए ।

सुरधुनि बोली—"क्यो ? पास आओगे तो लोग कुछ कहेगे तो नही ?"

सुरधुनि के लहजे मे व्यग्य का पुट था ।

ज्वालामुखी का लावा भूमि के अन्दर सुलगता रहता है, पर किसी दिन वह भूचाल से परिचालित होकर विपुल वेग से बाहर की ओर दौड पडता है । घर के लोगो के कारण दबा हुआ मन का अग्निप्रवाह एकाएक फूट पडा । प्रद्युम्न बोला—"तुम क्या हमेशा दूसरो की बात ही सोचती रहोगी ?

"वह तो तुम कर रहे हो । यह अच्छी रही ! उलटा चोर कोतवाल को डाँटे !"

"चलो ऐसे ही सही, पर पास क्यों नही आती ?"

"पास क्यो आऊँ ?"

प्रद्युम्न बोला—"नही तो दूसरे न मालूम क्या सोचेगे ?"

"याने ?"

प्रद्युम्न बोला—"पति-पत्नी आपस मे कितना फासला रखकर चल रहे है, यह देखकर यह बताना असम्भव नही कि उनकी शादी हुए कितने दिन हुए ।"

सुरधुनि बोली—"अच्छा यह बात है! मैने तो यही सुना था कि विधाता वर और वधू को एक साथ सी देते है, पर नही जानती थी कि वे दर्जी की तरह फीता और कैंची लेकर हर समय उस बन्धन को ढीला भी करते रहते है ।"

अब सुरधुनि खुलकर बाते करने लगी थी। देखकर प्रद्युम्न बहुत खुश हुआ। बोला—"सचमुच फासला देखकर यह बताना सम्भव है कि विवाह कब हुआ। तुम मे मुझमे जितना फासला है, उसे देखकर छोकरे कह रहे होगे कि हमारी शादी हुए सात साल हो गये ।"

"फिर भी गनीमत है कि सात ही साल हुए ।"

प्रद्युम्न बोला—"देखो, साल बढते जा रहे है, जल्दी से पास आ जाओ ।"

"पास आने से उम्र घट थोडे ही जायेगी ?"

अब की बार प्रद्युम्न ने आस-पास घूमने वालो की आँखे बचा कर सुरधुनि का हाथ पकडकर खीच ही लिया। सुरधुनि मानो इसके लिए तैयार ही थी। दोनो हाथ पकडकर चलने लगे। सुरधुनि बोली—"अब कितने साल की शादी है ?"

आनन्द से उच्छ्वसित होकर प्रद्युम्न बोला—"परसों ही, जैसे वह शुभ रात्रि थी ।"

सुरधुनि बोली—"और अब क्या झगडा है ?"

"नही, झगडा नही, उसका उलटा, जब पहले-पहल प्रेम का सूत्र-पात होता है, तब प्रेमी-प्रेमिका इस प्रकार रास्ता चलते है, मानो वे वृक्ष और वल्लरी हो। गले मे पडी हुई माला का व्यवधान भी सहन नही होता ।"

कहते-कहते प्रद्युम्न ने आवेग के मारे करीब-करीब आँखे बन्द करली। सुरधुनि ने तैश मे आकर कहा—"इसके माने यह हुए कि हजरत ब्याह के पहले ही इन सारी बातो को समाप्त कर चुके है ।"

प्रद्युम्न डरा कि यह अच्छी मुसीबत आयी, पर ऐसे समय मे हार मानने से काम नही चलता था। आज पहला ही मौका लगा है नव-वधू के साथ सान्ध्य-विहार करने का। घर मे लौटे कि फिर वही चक्र चलेगा। सुरधुनि घर पहुँची कि फिर वह सास की बहू हो जायेगी। इस समय क्रोध या मनमुटाव आदि मे एक मिनट भी नष्ट करना उचित न होगा, इसलिए उसने बातो का रुख फेरते हुए कहा—"मै जो कुछ कह रहा हूँ, वह तो शास्त्रो की बात है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन मे इस प्रकार की बातो का मौका नही आता। फिर शास्त्र और जीवन मे बडा फर्क है। एक केवल सिद्धान्त है, दूसरा तजुर्बा।"

सुरधुनि ने मुँह बनाते हुए कहा—"यह बात सब पर लागू नही होती।"

बुद्धिमान प्रद्युम्न ने कहा—"अब तक तो पुस्तकी विद्या थी अब चाहता हूँ कि उन्ही बातो को जीवन मे प्रत्यक्ष करके देखूँ। अब जाने दो इन बातो को, पास आओ। मान लो कि हम लोगो का 'इगेजमेट' भर हुआ है, उसी के अनुसार व्यवहार करो।"

सुरधुनि हँस पडी, बोली—"क्या उस दिन दोनो के बीच जो फासला रहता है, उसे नापा नही जा सकता ?"

प्रद्युम्न खुश होकर बोला—"नही, उस दिन प्रेयसी के हाथ मे अँगूठी पहिनायी जाती है, इसलिए दोनो मे फासला अधिक से अधिक उतना ही हो सकता है, जितनी अँगूठी की मोटाई-चौडाई है।"

सुरधुनि बोली—"इसके माने यह हुए कि अँगूठी पतली से पतली होनी चाहिए।"

"तुमने ठीक ही कहा है, इसीलिए विलायत मे अँगूठियाँ इतनी पतली होती है। दुष्ट लोग इसकी यह व्याख्या करते है कि अँगूठी जितनी पतली होगी, उसे उतनी ही जल्दी तुडाकर भागना सम्भव होगा।"

कृत्रिम भय से कपोलो पर हाथ रखती हुई आँखे फाडती हुई सुरधुनि बोली—"कितनी भयानक बात है! तो तुम यह सारी बाते इसीलिए कर रहे हो कि रस्सी तुडाकर भाग सको। इसीलिए मुझे पास बुला

रहे हो । नही जी, मै ऐसी बातो मे नही पडती, मै दूर हट जाती हूँ, यही हमारे लिए भला है ।"

घबराकर प्रद्युम्न बोला—"नही, नही, ऐसा नही । तुम इतनी दूर जा रही हो । शास्त्रो का मत है कि स्त्री तभी ऐसा करती है जब उसे विवाह के पहले के प्रेमियो की याद आ जाती है ।"

जल्दी से सुरधुनि वापस आ गयी । बोली—"तुम्हारे मुँह मे कोई भी लगाम नही है । छि छि !!"

"तुम भी तो दुख देना नही छोडती ।"

सुरधुनि कुछ विनय के स्वर मे बोली—"मुझ से ही तुम पास आने के लिए क्यो कहते हो ? तुम स्वय मेरे पास क्यो नही आते ?"

"स्त्रियाँ ही अभिसारिका होती है । सास, ननद सबसे छुपकर, गालियो और तानो की उपेक्षा करके, रात-दुपहर मे राधा ही कृष्ण के लिए निकल पडती थी, न कि कृष्ण राधा के लिए ।"

"यह कृष्ण का जुल्म था । न तो कृष्ण को कभी कोई बदनामी उठानी पडी और न कभी और कोई आफत ही आयी । उन्हे कभी परीक्षा भी नही देनी पडी । फिर भी बाँसुरी बजा-बजा कर घर से निकालने वाले वे ही थे । उन्होने दूसरो की नीति या सामाजिकता को बदलने की कोई चेष्टा नही की । हाँ, मजे उन्होने ही उडाये ।"

"इसी कारण राधा को लोग प्रेमिका के रूप मे आदर्श मानते है, पर कृष्ण को कोई आदर्श नही मानता । देखो सब भक्त राधा होना चाहते है, पर कृष्ण होने की बात कोई नही कहता ।"

सुरधुनि बोली—"मै तो कहती हूँ कि ये सारी बात गलत है । मेरा वश चलता तो मै कृष्ण से कहती—कृष्ण, तुम अपनी परीक्षा दो । बाधाये, अपवाद, अवरोध सब तुम्हारे सामने आये, फिर देखती हूँ तुम्हारी बाँसुरी कैसे बजती है ।"

"याने तुम सब उलट देना चाहती हो ?"

"हाँ, कृष्ण को मालूम तो हो कि आटे-दाल का भाव क्या है ? बाँसुरी बजा दी और प्रेमिका को बुला लिया । किसी प्रकार की न कोई बाधा और न बदनामी !"

आलोचना बडी गम्भीर होती जा रही थी। नवदम्पति के लिए बिल्कुल सुविधाजनक नही थी। घर भी कोई दूर नही था। पुरानी बस्ती के शुरू के मकान दिखायी देने लगे थे। प्रसग को जल्दी समाप्त करने के लिए प्रद्युम्न बोला—"राधाकृष्ण की युगल मिलन वाली मूर्ति ही चिरन्तन प्रेम की अवस्था है। मानो आज ही मिलन हुआ है, और कभी अन्त न होगा।"

"फिर अर्द्धनारीश्वर मूर्ति क्या है?"

प्रद्युम्न बोला—"इसमे विधाता पुरुष हार गये। नापते-नापते देखा कि किसी भी गज से नापने का काम नही चल सकता तब गज ही फेक दिया, क्योकि वे यह समझ नही पाये कि यह चिर-विच्छेद है या चिर-मिलन, जिसमे विछोह होता ही नही।"

अकस्मात उन्हे मालूम हुआ कि पीछे से किसी ने हँसी रोकी। घूमकर जो देखा, उससे सुरधुनि का सिर यो ही झुक गया और साडी का आँचल कन्धे से सिर पर पहुँच गया। प्रद्युम्न की हालत भी उसी प्रकार की हुई। पर-पुरुषो के क्षेत्र मे आँचल खीचने की किसी क्रिया का मौका नही रहता। वे जल्दी-जल्दी चलने लगे। अब तक उन्होने किसी को पास न समझकर जो आलोचना की थी, सभव है इन दुष्ट नवयुवको ने उन सारी बातो को सुना हो और इसीलिए शायद वे उस मैदान से पीछा करते हुए यहाँ आये हो।

खैरियत यह है कि दुनिया भर के ऐसे पाजी और अवारा लोगो को भी कुछ न कुछ लज्जा रहती है। जब उन अवारो ने देखा कि 'पकडे गये है, तो वे भी दूसरी तरफ चले गये। एक अवारे युवक का शरीर चादर से लिपटा हुआ था, मानो हृदय मे कितनी ही वेदना थी। फिर भी लौटते समय अवारो मे से एक दुलत्ती झाडता ही गया। मुँह से अजीब आवाज निकालते हुए बोला—"फीते से इनके प्रेम को नापना कठिन है। इनको सभी बाते मालूम है। कौन कहेगा कि ये नवदम्पति है, ये लोग चिरन्तन प्रेमी-प्रेमिका है।"

कवि प्रेम के रस को आदिरस कहते है। इसमे सन्देह नही कि उनका यह कथन बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। पर नव-रसो से भी नवीन और आदिरस से भी प्राचीन एक अनन्त रस हम सब के जीवनो मे, अस्थि और मास मे, समाविष्ट है, इस बात को कवि भी नही जानते।

उनके लिए यह जानना सम्भव भी नही है। जो लोग साधारण वाक्य को रसगुल्ले की तरह रस मे डुबाकर मोअन देकर काव्य बना डालते है, वे हलवाइयो की तरह मिठाई के व्यापारी है। वे मीठे को और मीठा बनाते है। वे ऐसा व्यापार भी आवश्यकता के कारण ही करते है। पर इस ससार मे ऐसी बहुत सी चीजे है जो मीठी नही बन सकती, जैसे लाल मिर्च। इसी कारण काव्य-जगत एक अधूरा जगत है। मद्रास के लोग तीखा, खट्टा और नमक मिलाकर जिस 'रसम्' को तैयार करते है वह केवल मद्रास की चीज नही, हमारे घरो और हमारे जीवन मे यह स्वाद सदा सर्वत्र मिलता रहता है। कुछ ढीठ लोगो का कहना है कि दाहिनी तरफ जो लोग रहते है यानी पुरुषो को अक्सर अपनी वामाओ की रसना मे यह रस चखने को मिलता है।

गोरे और हम लोग एक ही आर्यवश से उत्पन्न हुए है, इसका प्रमाण भाषा से मिल चुका है। एक प्रमाण लीजिए। हम जिसे कटक रस कह सकते है, वही अग्रेजी मे कैण्टकैरस (Cantankerous) हो गया है।

दम्पति मे हम लोगो का मित्र कौन है ? उनमे से जो दमदार है वह नही, बल्कि उसके दम के मारे जो दिन-रात वर्स हाफ यानी 'मन्द-न्तर अर्द्ध' बनकर पतित होता रहता है, वही हम लोगो का मित्र है, अर्थात् पति। प्रद्युम्न और सुरधुनि अभी रस समुद्र के आरम्भ मे ही थे। अन्त तक पहुँचने मे बहुत देर थी। इससे दुनिया का कुछ आता-

जाता नही, क्योकि जिसे हम कण्टक रस बता चुके है, वह चारो तरफ व्याप्त है। बकिमचन्द्र की रसिक नौकरानी ने गाया था–"विधाता ने कण्टक से रचे मृणाल।" एक दूसरे कवि भी इसी प्रकार कह गये है कि कण्टक देखकर कमल से मुँह क्यो मोडते हो ? यद्यपि असल मे कमल मे कण्टक नही होते, फिर भी कवियो की इन उक्तियो के निहितार्थ को हम सभी समझते है, और हम कण्टक के कारण कमल से कभी घबराये नही। यदि कमल मे कण्टक रह सकते है तो उन कण्टको मे रस भी तो हो सकता है ?

जिस दिन प्रद्युम्न सुरधुनि को लेकर अकेला घूमने गया था उस दिन अवारा लडको ने उसका पीछा किया था, यह खबर किसी तरह मोक्षदासुन्दरी के कानो मे पहुँच गयी। मुहल्ले की कौशल्या फूफी भी धनी पडौसिन की बदौलत देवघर भ्रमण करने आयी थी, उसे भी यह खबर मिली। बस फिर क्या था, एक की दो और दो की चार बन गयी। स्त्रियो को तो कुछ कच्चा माल, जैसे कच्ची तरकारी मिलनी चाहिए, फिर उसे बढिया से बढिया तरकारी का रूप देकर परोसने मे देर नही लगती। जिस रूप मे वह परोसी जाती है, उसमे और कच्चे माल के रूप मे कोई भी सम्बन्ध ज्ञात नही होता। इस ख़बर की भी वही दशा हुई। कौशल्या फूफी ने चेहरा बनाकर कहा– "बहन, तुम तो भोली हो, पर तुमसे क्या छिपाऊँ ? अवारो ने बहू का पीछा किया था, यह कहो कि हमारी बहू बडी सयानी है, इसलिए लडके का हाथ छोड घूँघट काढ सीधी घर चली आयी। कोई ईसाइन होती तो देखती कि क्या गुल खिलता ?"

यो ऊपर से तो यह बहू की प्रशसा ही लगती थी, पर कौशल्या की सधी हुई जीभ प्रशसा के मिस से जहर फैला गयी और ऐसे फैला गयी कि कहने वाली को दोष न दिया जा सके और साथ ही कॉटा भी चुभता रहे। इसी का नाम कण्टक रस है, जो हमारी राष्ट्रीय सम्पत्ति है।

बाते थोडी थी, पर मोक्षदा को तिलमिला देने के लिए यथेष्ट थी। बाग बाजार के प्राचीन घराने की नयी बहू दिन-दहाडे बिना

घूँघट काढे पति के साथ चले और सो भी पति का हाथ पकडकर, इससे बढकर लज्जा की बात और क्या हो सकती है ? मुहल्ले के नाते फूफी, शायद इसी बात से लज्जित होकर चली गयी । यह उसी प्रकार की घटना थी जैसे साँप डसकर बाबी मे घुस जाये ।

दुनिया सरपट आगे बढ रही थी, पर यह फूफियाँ जहाँ की तहाँ पडी हुई थी । कहते है कानून के हाथ बहुत लम्बे होते है, पर इन फूफियो की जीभो की लम्बाई शायद उससे भी अधिक होती है । ये लोग कभी ईसाइयो के सम्पर्क मे नही आयी, पर सर्वज्ञा होने के नाते यह चाहे जिसको ईसाई करार दे सकती है । विरोधी वातावरण तैयार करने के लिए ज्ञान की आवश्यकता थोडे ही है । जो ज्ञान ही होता तो फिर कण्टक रस कहाँ से उत्पन्न होता ?

शादी के उपलक्ष मे प्रद्युम्न केवल एक सप्ताह कालिज से अनुपस्थित रहा । कोई ऐसी बडी बात नही, पर हरिहर ने तपाक से उसका स्वागत यो किया—"अच्छा, अब आप पधारे है। मालूम होता है स्त्री अब पुरानी हो गयी है ।"

अपनी आँखो को आकर्ण विस्तृत करते हुए अमिय निमाई ने कहा—"ये बात थोडे ही है, असली बात तो यो है कि कल रात को उनसे कोई झगडा हो गया होगा ।"

अपने को मनोविज्ञान का पडित मानने वाले (मान न मान मै तेरा मेहमान के ढग पर) जगबन्धु ने पान चबाते हुए बडे इत्मीनान के साथ कहा—"तुम लोग क्या जानो इन गहरी बातो को । यह तो मनोविज्ञान की बात है। प्रद्युम्न आज कालिज मे इसलिए आया है कि एकरसता दूर हो, और रसबोध ज्यो का त्यो कायम रहे । जैसे कूदने के लिए पीछे हटकर छलाँग मारी जाती है, यह वैसी ही बात है, इस क्षेत्र मे पीछे हटना भ्रममात्र है ।"

अमिय निमाई सुनकर दग रह गया । बोला—"प्यारे सच कहो, क्या अभी से जीवन तीखा लगने लगा, या कोई काव्यमय पेच है ।"

"कौनसा काव्यमय पेच ?"—सब लोगो ने उत्सुकता के साथ प्रश्न किया ।

पर जगबन्धु आसानी से उत्तर देने वाला नही था, मुस्कराकर बोला—"दो मिनट ठहरो।"

अभी श्रेणी मे अध्यापक जी के आने मे कुछ देर थी। जगबन्धु प्रद्युम्न के पास जाकर बैठ गया और गपशप मे मशगूल हो गया। फिर एकाएक 'गोल्डन ट्रेजरी' के कविता के स्वर्ण-भडार से उसने एक कविता निकाली जो पेन्सिल से लिखी हुई थी। उसका भावार्थ यो था—

हे मेरे प्रेम के अनन्त धन

तुम्हे नित नये रूप मे पाता रहूँ,
इसलिए तुम्हे खोता रहता हूँ,
प्रतिपल, प्रतिक्षण,
हे मेरे प्रेम के अनन्त धन !

एकाएक जगबन्धु ने सबके सामने यह कविता कही और फिर सबसे बोला—"अब समझे ?"

जिस बेचारे को घेरकर यह सारा षड्यत्र चल रहा था, वह पहले इसे नही समझ सका। दूसरी दफा सोचने के बाद उसे समझ आयी कि यह उस पर और उसकी नववधू पर कटाक्ष है। वह लज्जित हो गया और उसने सिर नीचा कर लिया। श्रेणी मे कुछ छात्राये भी थी। वे भी इस धनी सहपाठी के अल्पायु विवाह को परिहास और अनुकम्पा की दृष्टि से देखती थी। श्रेणी मे छात्र और छात्राओ का परस्पर सम्बन्ध अभी भी सहन नही हुआ था। फिर भी जगबन्धु ने ऐसा दिखाया कि उसने छात्राओ को लक्ष्य करके ही इस कविता की आवृत्ति की। जब श्रेणी समाप्त हुई तो कुछ छात्र जगबन्धु पर बहुत नाराज हुए। बोले—"हम हँसी-मजाक करते है, यह और बात है, पर सारी श्रेणी के सामने इस तरह का मजाक बनाकर तुमने

बुरा किया ।

उसने अपनी सफाई मे कहा—"उस दिन मेरा परिचय ढग से नही कराया था, याद है न ?"

नीहार ने घृणा और अनुकम्पा के साथ कहा—"राम राम, तुम इतने कमीने हो । डेढ सौ मित्रो की भीड मे सबका परिचय ढग से नही कराया जा सकता था । प्रद्युम्न ने तुम्हे पीटा नही यही काफी है। तुम हटो यहाँ से ।"

कुछ कुनमुनाता हुआ जगबन्धु वहाँ से चला गया । यदि लोग उस पर ध्यान देते तो सुनाई पडता—वह कह रहा था—'तुम लोग सब शहर के छोकरे हो और गिरोहबन्द हो, इसलिए जाने को तो चला जाता हूँ, पर ऐसा डक मारे जा रहा हूँ कि कुछ दिन याद करोगे । मेरा क्या, न आगे नाथ न पीछे पगहा ।'

आने-जाने के बारे मे हम कुछ सोचते नही है, पर जहाँ जाते है वही काँटे बिछाते जाते है । जब जगबन्धु चला गया तो नीहार ने इसी बात को समझाकर कहा—"हम बगाली परम वैष्णव होते हैं ।"

अब हरिहर को यह बुरा लगा । वह न शिव का भक्त था और न कृष्ण का । उसके यहाँ काली की पूजा होती थी । बोला—"तुम्हारा यह कथन सत्य नही है । बगालियो मे जो सबसे अच्छे होते है, वे शाक्त होते है ।"

नीहार हँसकर बोला—"जाने दो इन बातो को, पर याद रक्खो कि हमे जो कण्टक रस मिला है, वह वैष्णव कहानी से ही मिला है और जो लोग वैष्णव नही है, उन्हे भी यह रस कृष्ण-पूजा का अनुसरण करके मिला है ।"

१५

अब एक नया विषय छिडता देखकर सब लोग बरामदे मे एकत्र हो गये। मालूम होता था कि अध्यापक महोदय कक्षा मे नही थे। इसीलिए छात्रो को यह मौका मिल गया कि वे आपस मे बतकही करे।

सब लोगो ने एक साथ प्रश्न किया—"यह क्या बात है ? कृष्ण के साथ कण्टक का क्या सम्बन्ध है ?"

"बात यह है कि कृष्ण तो राधा को बाँसुरी बजाकर आकर्षित करते थे, पर जो स्त्रियाँ राधा से जलती थी वे भला क्यो खुश होती ? वे बहुत दुखी होती थी, उनकी छाती पर साँप लोट जाता था।"

एक ने कहा—"ठीक ही है, दुनिया मे दो तरह के लोग है। शरीफ और पडोसी। ये ईर्ष्यालु स्त्रियाँ बडी सच्चरित्र थी, उन्हे किसी ने बाँसुरी के द्वारा नही पुकारा, पुकारा तो राधा को पुकारा, इसलिए उनकी निगाह मे दोष राधा का ही था।"

नीहार बोल उठा—"बिल्कुल ठीक है, पर इसके बाद वाली बात भी सुनो। क्या राधा को इससे कष्ट पहुँचा ? नही। राधा को जितनी ही बाधाये मिलती गयी, उसका सुख उतना ही बढता गया। यह बिल्कुल वही हुआ कि मर्ज बढता गया ज्यो-ज्यो दवा की।"

हरिहर बोला—"मुझे प्रेम का तजुर्बा तो नही है, पर एक साक्षात् तजुर्बा है। वह यह कि मुझे सगीत से जरा प्रेम है, इसलिए मै प्रतिदिन प्रात काल कुछ अलाप करता हूँ। अब यह कहो कि इससे किसी के बाप का क्या आता-जाता है। पर पडोसी यह समझते है कि मै ख्वामख्वाह उन्हे परेशान करता हूँ, इसलिए वे इस ढग से गालियाँ देते कि मै समझ जाऊँ कि मुझ पर ही यह वर्षा हो रही है, पर कर कुछ भी न पाऊँ क्योकि कानूनी रूप से वह गालियाँ मुझ पर नही पड़ती। कुछ भी हो इससे गाने का रस बढ जाता है।"

पीछे से किसी ने बहुत महीन आवाज मे कहा—"तुम गीत के काटे बोते हो और तुम्हारे पडोसी गालियो के ।"

एक दूसरे साहब उधर से तमककर बोले—"कहाँ कृष्ण-कन्हैया की बात हो रही थी और बीच मे यह मुए मनहूस को बात छेड दी। आखिर कुछ हद भी हो ।"

सगीतशास्त्र के प्रति इस प्रकार कटाक्ष से कोई भी नौजवान खुश नही हुआ । बात यह है कि उनमे से कोई खुला और कोई छुपा रुस्तम था । हरिहर ने हहराकर कहा—"दुनिया मे मनहूसो की हो सख्या सबसे अधिक है, पडोसी तो पाजी होते ही है । कहा है न—'गुन न हिरानो गुन गाहक हिरानो है ।' गाँव का जोगी जोगडा, आन गाँव का सिद्ध । पडोस मे कोई गुणी व्यक्ति पैदा हो, ये लोग नही चाहते । पर हम लोग भी ऐसे है कि पडोसियो का नाकता बन्द कर देते है ।"

"आखिर इन लोगो से पार पाने का उपाय क्या है ?"

"उपाय बहुत ही साधारण और सुपरिचित है । एक लगाए चार पाए । यदि वे हम पर क्रोध करते है तो हम समझेगे कि जुकाम के कारण हँसने के बजाय वे खाँस रहे है । वे क्षमा के योग्य है—ऐसा सोचकर दर्द के साथ खिड़की के सामने खडे होकर और जोर से गाने लगेगे ।"

अमिय बोला—"पर मैने सुना था कि कला का उद्देश्य टीस पैदा कर देना है, पर तुम्हारे वर्णन से तो यह मालूम होता है कि तुम चीस पैदा करते हो, इसी कारण वे खीस काढते रहते है ।"

नीहार ने कहा—"केवल यही एक चिन्ता का विषय नही । और सुनो—दोनो हाथ सामने फैलाकर सगीतदेवी के इस आह्वान को क्या पडोसी सगीत-चर्चा कहेगे । उनकी राय में तो तुम गीत के समुद्र मे गोता लगा रहे हो । सगीत तो सीखने से रहे । केवल गोता लगाते रहोगे ।"

दूसरे मित्रो ने कहा—"मित्रवर, तुम इससे घबडाओ नही । अपने गीत को प्रबल शक्ति द्वारा सबको स्तब्ध कर दो । गीत मे घायल

करने की शक्ति है तो क्या, चाँद मे भी तो कलक है ।"

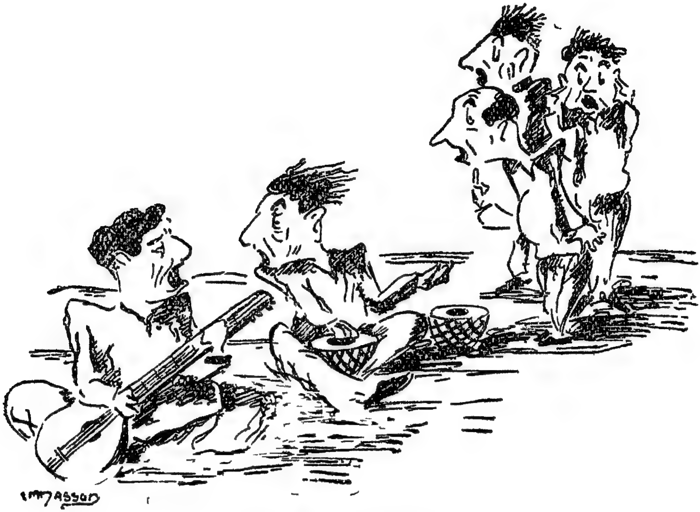

गीत के समुद्र में गोता

नीहार ने कहा—"चाँद मे केवल कलक ही नही है फन्दा भी है । बेवकूफ बनाने का फन्दा !"

एक ने उसे टोकते हुए कहा—"क्या बेतुकी बात कही है, तेली रे तेली तेरे सर पर कोल्हू !"

नीहार कुछ नाराज होकर बोला—"समझते तो हो नही, और दाल-भात मे मूसरचन्द बनकर ख्वामख्वाह कूद पडते हो । चन्दा मे फन्दा क्या है, यह तभी समझोगे जब दिमाग पर जरा रन्दा फेरोगे। चाँद देखते ही तरह-तरह की मूर्खतापूर्ण बाते मन मे दौडने लगती है । जो पूर्ण चन्द्र हुआ तब तो कोई बात ही नही । चाहे मौसम हो या न हो, कोयल कूकने लगेगी और मन्द शीतल समीर बहने लगेगी । न मानो तो जाकर सिनेमा मे पूर्णिमा के दृश्य देख आओ। किसी सिनेमा मे चाँद का दृश्य दिखलाया गया हो और उसके साथ

ये बाते न हो ऐसा हो नही सकता । चाँद की रोशनी से मुझे अन्धकार अच्छा लगता है ।"

"तुम्हारी बाते कुछ-कुछ ऐसी मालूम होती है, जैसी मनुष्यो से घृणा करनेवाले लोगो की हुआ करती है।"

"नही, यह बात नही । चाँदनी हमे ठगती है, पर अन्धकार हमे ठगता नही । अपनी असलियत चाँदनी मे मालूम हो सकती है या अन्धकार मे ?"

"रहने दो बाबा, तुम तो दार्शनिको की तरह बाते करने लगे । तुम्हारी बात समझ मे नही आती ।"

नीहार ने आगे यह आलोचना करनी नही चाही । बोला—"देखो, वह अध्यापक प्रसन्न बाबू आ रहे है। वे हमारी आलोचना सुनकर प्रसन्न नही होगे, इसलिए चलो क्लास मे । हम उन्हे अप्रसन्न नही करना चाहते ।"

रात के समय प्रद्युम्न ने बातचीत करते समय अपनी दुलहिन को सारी बात बता दी । सुरधुनि इस पर हँसकर लोटपोट हो गयी। वह बोली—"कालिज मे पढना और साथ ही शादी करना, ये दोनो बाते एक साथ नही चल सकती । इसी से यह सजा मिली है ।"

× × × ×

फिर सुरधुनि ने अपनी तरफ से उन बातो को भी सुनाया, जो उस दिन दोनो के टहलने के कारण पैदा हुई थी । कौशल्या फूफी ने जो बाण चलाये थे उनका भी उल्लेख किया । प्रद्युम्न सुनकर दग रह गया । बोला—"अजीब दुनिया है कि सब लोग डक मारने के लिए तैयार रहते है ।"

हँसकर सुरधुनि बोली—"यही तो मै भी देख रही हूँ । शूल ही मिलते है, फूल की आशा कम है ।"

प्रद्युम्न बोला—"पर हम तो किसी का कुछ बिगाडते नही, फिर लोग ऐसा क्यो करते है ?"

"अच्छा ही करते है, क्योकि इससे आँखे खुलती है ।"

"तो क्या हमारी आँखें बन्द है ?"

"हाँ, कुछ-कुछ बन्द है।"

"हमे क्या बुरे-भले का पता नही है कि लोगो को हमे समझाने की जरूरत होगी ?"

"हाँ, जरूरत है। वाक्य-रूपी अधरो से छूटे तीरो से तो यह आशा करनी चाहिए कि सुधा की वर्षा करे, पर फूफीजी जैसी प्रकृति के व्यक्ति उनसे जहर उगलने का काम लेते है।"

प्रद्युम्न बोला—"वाह तुमने तो बडी कवित्वपूर्ण बात कही। कहो किस कवि से ये बाते सीखी ?"

"बिल्कुल ठीक, मैने पुस्तक मे ये बाते पढी थी, अच्छी लगी, इसलिए याद रही।"

"ऐसी बात तो कालिज मे सिखानी चाहिए, न मालूम वहाँ क्या-क्या बेकार बाते सिखाते है ?"

"हम लोग घर बैठे कितनी ही बात सीख लेती है, समझे गुरुजी महाराज !"

"गुरुजी महाराज नही, कहो आर्यपुत्र !"

"और तुम मुझे क्या कहोगे ?"

'कहूँगा 'हला पिय सही' और इसके उत्तर मे तुम और पास आकर कहोगी 'अज्जउत्त'।"

सुरधुनि को उस दिन टहलने की बात याद आगयी, बोली—"तुम पुरुष भी बडे कगाल होते हो। उस दिन उन नौजवानो ने हमारा किस प्रकार पीछा किया था।"

प्रद्युम्न ने मुँह टेढा करते हुए कहा—"वे लोग आवारा थे, पर उनको दोष भी नही दिया जा सकता। मेरी समझ मे नही आता कि उन्हे दोष दिया जाय, या उनकी प्रशसा की जाय ?"

"इसका क्या कारण है ?"

"कारण तो स्पष्ट है। घूरना भी एक तरह से प्रशसा करना है। जिसे घूरा जाता है, उसकी तारीफ तो की ही जाती है साथ ही उस व्यक्ति को दाद भी दी जाती है जिसने उसे चुना है।"

सुरधुनि बोली—"आवारा कही के !"

"यह अवारापन नही है, बल्कि विश्व का सबसे बडा सत्य है। जिसे चाहता हूँ उसे दुनिया की आँखो से परखना चाहता हूँ।"

"दूसरे शब्दो मे तुम बाँटकर उपभोग करना चाहते हो, शायद तुम्हारे कालिज के साथियो और साथिनो ने यही सिद्धान्त निकाला है।"—सुरधुनि की आँखो मे कृत्रिम क्रोध कौध गया।

प्रद्युम्न सम्हल गया कि कही यह कृत्रिम क्रोध वास्तविक क्रोध मे परिणित न हो जाय, इसीलिए उसने मोड लेते हुए कहा—"जिस शूल से आघात मिलता है, खोजने पर उसी मे कुछ रस भी मिलता है। प्रयास भी यही होना चाहिए कि शूल मे फूल देखा जाय।"

"जाने भी दो रसिक जी महाराज!"

कुछ भी हो, बादल छँट गये और उनकी मधुरात्रि रस से भर गई।

प्रद्युम्न और नही सह सका। उसने मन-ही-मन हिसाब लगाना शुरू किया कि क्या उसके सभी विवाहित मित्रो की दशा उसी की तरह है ? क्या सबके यहाँ नई दुलहिन इस प्रकार रिश्तेदारो की छाँह और घूँघट की ओट मे छिपी रहती है ? ऐसा तो मालूम नही होता।

रिश्तेदारो की छांह.

जगबन्धु को ही लिया जाय। उसकी शादी होने ही वाली है। देहात का रहने वाला है, पर उसके घर मे कोई ऐसा व्यक्ति नही, जो उसकी नई दुलहिन पर ग्रहण की तरह छा जाय। यहाँ अजीब हिसाब-किताब है, मानो दिन मे पति के कमरे मे नई दुलहिन आयी

कि उसका चरित्र भ्रष्ट हो गया। बात कुछ कर्णकटु है, पर जब ऐसी दयनीय अवस्था है तो इन्ही शब्दो मे सोचना पडता है। सबसे बडी मुसीबत तो यह है कि हम चूँ तक नही कर सकते।

और यह सुरधुनि भी अजीब व्यवहार करती है। यदि वह मौका लगाना चाहे तो क्या लग नही सकता ? ऐसी बात नही है पर वह लज्जा और कुछ हद तक अभिमान के मारे, मौका स्वय सामने आ जाय तो भी, उसका फायदा नही उठाती। यो तो वह तुलसी की कविता से मिलती है, पर दूसरो का साथ होते ही वह चन्दवरदाई के काव्य की तरह हो जाती है। दिन मे वह अपने को कभी खोलती नही, नौकरानियो के द्वारा पहिनायी हुई तरह-तरह की साडियो मे मुँदी पडी रहती है। दिन भर बाते एकत्र होती रहती है, रात को उनकी सिटकनी खुल जाती है।

उस दिन रात को यही बात चली। माँ के विरुद्ध विद्रोह करने का साहस प्रद्युम्न मे नही था। वह अधिक से अधिक सुरधुनि को भडका सकता था। बोला—"जानती हो सुरधुनि, कालिदास ने कहा है कि जो सुन्दर है वह हर हालत मे सुन्दर है। कमल का फल सेवार से घिरा रहता है, फिर भी वह सुन्दर मालूम होता है।"

सुरधुनि बोली—"कालिदास महोदय को अब क्या कहा जाय। वे अजीब चरखटे थे।"

प्रद्युम्न बोला—"आजकल की आधुनिक स्त्रियो से, जो पैरिस से लेकर न्यूयार्क तक फैशन का अध्ययन करती रहती है, किसी ने कालिदास का काव्य पढकर यह नही कहा, तुम ऐसा करो। फिर भी उन लोगो ने समझ लिया है कि जब वल्कल से शकुन्तला सज सकती थी, तो बगल कटी हुई और सीने तक की पोशाक भी मेम साहबो के लिए सुन्दर हो सकती है।"

सुरधुनि ने कृत्रिम क्रोध से कहा—"तुम तो बडी दूर की कौडी लाते हो। पहले से क्यो नही कह दिया कि तुम्हे अँगोछा पहनी हुई मेम पसन्द है।"

कहकर सुरधुनि दरवाजे की तरफ चल पड़ी। विपत्ति की लाल

बत्ती देखकर प्रद्युम्न दौडकर सुरधुनि के सामने खडा हो गया । सुरधुनि पहले से अधिक तैश मे आती हुई बोली—"ठीक है, स्त्री पर वाण-प्रयोग नही करोगे तो किस पर करोगे ? मुझे न ब्याह कर कालिदास मार्का किसी सन्तनी को ब्याह लाते तो छठी का दूध याद करा देती ।"

प्रद्युम्न की समझ मे यह बात आ गई कि मोक्षदा जब अपने हाथ से सुरधुनि को शिफौन की साडी और गलकट ब्लाउज देगी, तभी प्रद्युम्न का यह शौक पूरा होगा कि सुरधुनि आधुनिका बनकर उसके साथ टहले । दूसरे शब्दो मे भय दोनो के मन मे था ।

"तुमने मेरा हाथ नही छोडा ? देखना कही शास्त्रो के विरुद्धाचरण तो नही हो रहा है ?"

इसके उत्तर मे प्रद्युम्न और पास चला आया, इतना पास कि अब कुछ कहने-सुनने की जरूरत नही रही । पर थोडी देर मे ही सुरधुनि कृत्रिम कोप से बोली—"छोडो-छोडो । लोग क्या कहेगे ?"

प्रद्युम्न मुस्कराकर बोला—"मै तो तुम से यह उम्मीद करता हूँ कि तुम कहोगी 'मोहन मोसे करत रार, बहियाँ मरोर'·· इत्यादि ।"

इसके उत्तर में सुरधुनि बोली—"क्या आजकल यही सब सिखलाया जाता है ?"

"आजकल क्यो, इसका तो इतिहास कृष्ण कान्हा के समय से है, कौन जाने उससे भी पहले से हो ।"

"तो तुम कृष्ण कान्हा हो, और मै गोपी ?"

"नही, तुम राधा हो ।"

"मै राधा कैसे हो सकती हूँ ? राधा होने के लिए यह जरूरी है कि मै तुम्हारी मामी होती ।"

प्रद्युम्न को इसका कोई उत्तर नही सूझा, इसलिए उसने दूसरा उपाय किया । यो तो दिन मे सुरधुनि का जूडा दूसरे ढग से बाँधा जाता, पर रात को उसे ढीला कर दिया जाता था। प्रद्युम्न को जब उत्तर नही सूझा तो उसने एक ही झटके मे जूडा खोल दिया । फिर वह उसे नये फैशन के अनुसार बाँधने लगा कि देखे इस प्रकार वह

"दुहाई तुम्हारी ! तब तो फिर "

"फिर क्या ? घर छोड जाओगे क्या ?"

सम्हलकर सुरधुनि बोली–"हाँ, तुम क्या किस्सा सुना रहे थे?"

"किस्सा यह है कि थोडे ही दिनो मे गुल खिलने शुरू हो गये।

जो कभी मधुरा थी, वह अब ..

जो षोडशी थी, वह साँड-सी हो गयी और उसकी जीभ दिन-रात ऐसी लपर-लपर चलने लगी कि मन का मीत उससे पनाह माँगने

लगा। जो कभी मधुरा थी, वह अब तिक्ता हो गयी और उसकी छुरी के सामने बेचारा प्रेमी हलाल होकर जलाल खो बैठा। कभी वह कुछ कहती, कभी कुछ। एक दिन वह बोली—"मै यदि तुम्हारा पति होती, तो तुम्हे जहर दे देती।" इसके उत्तर मे प्रेमी महोदय ने कहा—"और मै यदि तुम्हारी स्त्री होता तो मै उस जहर को पी जाता।"

सुरधुनि का मुँह जरा-सा रह गयी। बोली—"वे तो अपने रिश्तेदारो से दूर अकेले रहते थे, फिर भी उनकी यह हालत हुई?"

कहकर सुरधुनि चुप हो गया। प्रद्युम्न ने बहुत खुशामद की, पर सुरधुनि ने पूरी बात नही कही। बात यही तक घट कर रह गई।

प्रद्युम्न सुरधुनि की न कही हुई बात को सोचने लगा। हाँ, अब वह समझ गया। सारे दिन रिश्तेदारो से घिरी हुई सुरधुनि का श्वास बन्द हो जाता है, पर इससे छुटकारा कैसे हो?

बडे दिन को जितनी गर्मी होनी चाहिए उससे कुछ अधिक ही थी। कई महीनो से यूरोप मे शीत-युद्ध के कारण लोगो के दिमाग गरम हो रहे थे। इसके अलावा महँगाई का बाजार भी गर्म था। भाषा मे नये-नये शब्द आये, जैसे चोरबाजारी, मुनाफाखोरी इत्यादि। कालिज मे छुट्टियाँ शुरू होने वाली थी, इसलिए लडके चीजे खरीदने के लिए बाजार मे निकल पडे थे। पर जब होमाग्नि ने देखा कि चीजो के दाम बढ़े हुए है तो वे अपने मेस मे लौट आये। अपने कमरे मे देखा कि भूषण्डी सेन काली की तसवीर देख रहा था।

वह बोला—"क्यो जी इस तसवीर के सिवाय और कोई चीज नही खरीदी ?"

"नही, इसको देख रहा हूँ।"

"प्रार्थना कर रहे हो कि इम्तिहान के दिन और आगे हटा दिए जायँ। इसको छोडो। प्रार्थना का जमाना गया। स्ट्राइक करो। इस युग मे वही सबसे बड़ा अस्त्र है।"

जय काला बाज़ार की.

मित्र ने कहा—"अब तो काली वरदान नदी दे सकती, बल्कि काला बाजार से ही वरदान मिल सकता है। काली नर-मुण्डमाला पसन्द करती है, किन्तु काला बाजार तो नरमुण्डो से फुटबाल खेलता है।"

होमाग्नि ने बाधा देकर कहा—"पर एक भारी फर्क है। काली मैया खुलेआम नर-मुण्डमाला से खेलती थी, किन्तु अब फैशन बदल जाने

से हाथ मे जहाँ नगी तलवार थी, वहाँ अब बहीखाते और थैली है। पहले काली मैया के पैरो के नीचे महादेव जी बसते थे, अब सारा भारत ही काला बाजार की महाकाली के पैरो के नीचे रौदा जाता है।"

कही से बहुत शोर सुनायी पडा। कोई मेस का दरवाजा इतना जोर से खटखटा रहा था कि मालूम होता था, टूट जायगा। एक छात्र ने दौडकर दरवाजा खोला तो चनपटी चट्टो साहब घुस आये। लोगो ने चनपटी की कनपटी गर्म करते हुए कहा—"प्यारे, क्या बात है ? इस तरह भाग क्यो रहे हो ?"

हाँफते हुए चनपटी ने इतना ही उत्तर दिया—"गुण्डे !"—और फिर चुप हो गया।

छात्रो ने कहा—"गुण्डा ! हमारे मेस पर गुण्डो का हमला हो गया ? देखे तो गुण्डे कैसे होते है ?"

सब लोगो के देश-प्रेम ने जोर मारा। वे ऐसे तैयार हो गये मानो डाडी मे नमक-सत्याग्रह करने के लिए तैयार होकर आगे बढ रहे हो।

चनपटी ने सम्हलकर कहा—"गली मे गुण्डे नही आये। वे कल्लू टोला के मोड पर थे कि बस मै सरपट भागा। एक बुड्ढे को छूरा दिखाया और मै दौडा। बुड्ढा रोने लगा और मै यहाँ पहुँच गया। समझे ? पहले आप, फिर बाप।"

होमाग्नि अधिक सहन न कर सका। वह घर के कोने मे जाकर लेट गया। घर कहना तो उचित न होगा कोठरी कहना चाहिए। थोडी देर बाद कई मित्र वहाँ एकत्र हुए। वे लोग इरादा करके आये थे कि बडे दिन पर किसी को दुखी नही रहने देगे।

मित्र भुशडि ने कहा—"भाई चनपटी, तुमने भागकर बहुत अच्छा काम किया। तुम्हारा जीवन तो दूसरो के लिए है। तुमको यह अधिकार नही कि उसे किसी तरह जोखिम मे डालो। लडाई मे अच्छी सेनाओ को सामने खडा कर दिया जाता है। इसी तरह नेता लोग पुलिस के सामने दूसरे के लडकों को खडा करके जनता की लडाई को जीतते है। इसी तरह इतने दिनो से ये ड्यूक ऑफ वेलिगटन की तरह

नरमुंडमाला छिपाकर काम मे लाई जाती है। काली मैया वाटर्लू की लडाई जीतने आ रही है।"

बाते इसी तरह चलने लगी। इन मित्रो को पता चल गया था कि होमाग्नि पश्चिम मे पला हुआ था। बगालियो की ऐसी जातिगत दुर्बलता से परिचित नही था। इसी से वह ऐसा दुखी था।

अब बाते सुनते-सुनते वह बिस्तर पर बैठ गया और व्यग करते हुए कहा—"आत्मसम्मान सम्पूर्ण रूप से निजी वस्तु है। उसकी रक्षा करना या न करना यह भी निजी बात है। पर हमने विश्व के लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर रखा है, इसीलिए आत्मसम्मान को जेब मे रखकर देश के लिए दूसरो के अपमान को सहते है।"

प्रेमाशु ने कहा—"होमाग्नि, तुम तो होम की अग्नि की तरह जल उठे।"

होमाग्नि ने व्यग करते हुए कहा—"हाँ, जब दूसरो के लिए ही जीवन उत्सर्ग कर रक्खा है, तो फिर उसी तर्क से दूसरो की चर्चा करना, दूसरो के दोष खोजना, यह हमारा धर्म है। इसी मे शक्ति और समय लगाना चाहिए।"

उधर से कविवर बोल उठे—"इसी कारण वैष्णव कवियो ने परकीया प्रेम का इतना गुण गाया है। परकीया न हो तो फिर राधा क्या और जब राधा नही तो फिर कृष्ण क्या ?"

भुशुंडि होमाग्नि को बहुत पसन्द करता था, बोला—"मान लो तुम सिर्फ अग्नि होते, रसोइये महाराज के चूल्हे की आग या मेम साहब के मुँह की सिगरेट की आग, तो फिर अग्नि होना ही व्यर्थ होता।"

नीहार ने कहा—"मान लो तुम्हारी पत्नी तुम्हे अजी कहकर पुकारे, तो वह रस उत्पन्न करने वाला न होकर रस का घातक होगा। इसके विपरीत यदि वह तुम्हे होमा डार्लिग कहकर पुकारे तो ऐसा मालूम होगा जैसे सारी पृथ्वी तुम्हारे सामने फिरकियाँ ले रही है।"

"तुमने ठीक कहा, इसीलिए पहले के लोग कहते है, पत्नी या धर्मपत्नी, आजकल के आधुनिक लोग कहते है वाइफ।"

लोगो ने कवि से कहा—"भई तुमने जब इतनी कृपा की तो यह

भी बताओ कि पत्नी और वाइफ मे क्या फर्क है । इसके बिना प्रसंग पूरा नही होगा ।

नीहार ने कनखी से नवविवाहित मित्र की ओर देखा, फिर बोला—"डरता हूँ कि कही सिडीशन या रानिद्रोह की गिरफ्त मे न आ जाऊँ ।"

"डरो मत । यहाँ हम सभी विश्व-प्रेमी है, यही नही, हम सभी कवि भी है ।"

नीहार बोला—"तो सुनो, धर्मपत्नी का अर्थ है, सर्वाधिकार सुरक्षित, नथनी-लटकन से सुशोभित, या यो भी कह सकते हो नख-दन्त शोभित घूँघट वाली, जिसे लोग बहू कहते है । विवाह के बाद लोग उसे नही पाते क्योकि वह घर की मालकिन और सास की पुत्र-वधू है । यदि उसकी बात याद आये तो रोना ही आता है ।"

नीहार ने अपने साथियो को देखा, फिर बोला—"धर्मपत्नी को यो समझो कि वह एक गतिशील बोझ है । गले मे हंमुली नही हार, ओठ पान के कारण लाल, मिल की गैली साडी पहिनी हुई, पैरो मे बिछूओ की झुनझुन और महावर का रग । घर मे वह राज करती है, घर के सारे काज भी सम्हालती है, उससे शादी तो हो सकती है, पर प्रेम नही ।"

प्रेमाशु ने व्याकुलता दिखाकर कहा—"तो फिर क्या हो सकता है ?"

"होने को बहुत कुछ हो सकता है, चाहे वह किसी कस्बे की हो या किसी देहात की, उसे हवा देकर वाइफ बनाया जा सकता है ।"

"तो फिर केवल नाम का ही झगडा है ?"

लोगो ने इस प्रश्न का स्वागत किया, पर कवि अपने ही ढग पर कहता गया—"जो तुम्हारी धर्मपत्नी है वह तुम्हारी बिल्कुल निजी चीज है, उसे तुम कपूर की तरह शीशी मे बन्द रख सकते हो, वही उसका स्थान है, उसमे वह ठीक भी रहेगी । उससे शादी करो, उसे खाने-पहनने को दो, गहने दो, प्रेम करो या न करो । चाहो तो भीतर ही भीतर कर सकते हो । पर जिसे प्रेम कहते है, उससे वह कोसो दूर है ।"

"और वाइफ की बात कहो ?"

"अरे भई वाइफ, वह तो हम लोगो की लाइफ है। वह पास रहकर भी दूर और निकट रहकर भी दुष्प्राप्य होती है। वह जार्जेट और सेन्डल पहनती है। वह सवेरे से शाम तक तुम्हे उडाकर चलाती रहेगी। प्रात काल के शापिग से लेकर सिनेमा तक वह जिन्दगी की बहार लूटती है और बेचारा पति लुटता रहता है। दफ्तर से आने से पहले देख लीजिये कि कही फुटबॉल मैच या कोई ऐसी बात है या नही, जिसमे फैशन वाली स्त्रियो के लिए जाना जरूरी है। अगर कोई ऐसी बात है, तब तो जान लो कि वाइफ महोदया वही तशरीफ ले गयी होगी, फिर तुम टापते रहो।"

"इश्क और प्रेम की बात तो बतलायी ही नही।"

नीहार बोला—"तुम चाहो तो उससे प्रेम कर सकते हो, पर वह भी तुमसे प्रेम करेगी ऐसी कोई गारन्टी नही। क्या पता तुम प्रेम के काबिल ही न हो।"

होमाग्नि बोला—"प्रेम न सही, पर अपने लिए झील मे जाकर सब कष्ट दूर करने का रास्ता तो बन्द नही है ?"

चनपटि पट्टो

"हॉ, युग बदल गया है, ऐसा कर सकते हो, झील के पानी मे अपने दुखो को शात करो, या शराब की बोतल मे उसे डुबा दो, एक ही बात है। डुबकी लगाई कि सब दूख मिट गये। यही कारण है कि कविताये लिखी जाती है, लोग दफ्तर से गैरहाजिर हो जाते है, बेकारी का शिकार होते है और रिक्शो के नीचे आ जाते है। धर्मपत्नी के लिए भला ऐसी बाते कभी सम्भव होती ?"

सबने नीहार की प्रशसा की कि क्या सूझ है। होमाग्नि ने

कुछ तैश मे आकर कहा—"कही की ईट कही का रोडा, यह अच्छी बेपर की हाँक रहे हो। मै तो यही कहता हूँ कि जब कोई शैली और रवीन्द्रनाथ की कवितायें पढेगा, तो कविता भी करेगा और प्रेम की उडाने भरेगा और नून, तेल, लकडी की बात भूल जायगा। यह तो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।"

उधर से गदाधर ने बेतुके रग से, पर बडे दर्द के साथ कहा—"कविता लिखो या प्रेम करो, पर इससे मकान वाला न तो किराये मे रिआयत करता है, न बनिया तकाजा करने से बाज आता है, और न दूधवाला दूध मे पानी कम मिलाता है।"

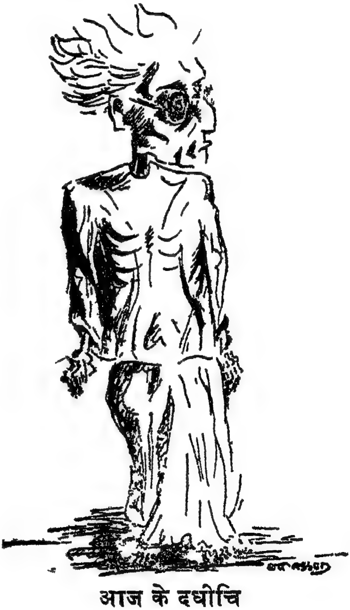

आज के दधीचि

प्रेमाशु बोला—"तभी तो लोग कवि को कपि कहकर चिढाते है, और कविता को कपिता कहते है।"

गदाधर ने टिप्पणी करते हुए कहा—"कवि शब्द इसीलिए लुप्त हो रहा है, अब तो सब पोयट है।"

नीहार बोला—"देखते हो, इस क्षेत्र मे भी दूसरो का शब्द अच्छा लगता है। पोयट कहा तो आँख के सामने किसी महामहिमान्वित व्यक्ति का चित्र आ जाता है, पर कवि कहने से कपि के आसपास किसी बात की याद आती है और आशुकपि तो और भी खतरनाक है, मानो आशु शब्द की दुम जुड जाने से उसके कपित्व से भी उसकी दुम सामने आती है। रही दूसरो की चीज की अच्छी लगने की बात, सो यह देख लो कि बगाली, जब भी गुस्से मे

आयेगा, तो वह या तो हिन्दी बोलेगा या अंग्रेजी।"

सब लोगो ने इसका समर्थन किया, बात यह है कि सब लोग इस बात को समझ चुके थे कि परकीया के पति आसक्ति-भक्ति के मार्ग से कही आगे निकल गये है। अब परकीया का एक दूसरा अर्थ दिया गया है। अब अपना घर सम्हालते नही बनता, इसीलिए नये युग के दधीचि हम मध्यम वर्ग के लोग ही है।

एक ने मानो इसी बात को व्यक्त करते हुए कहा—"हम विश्व-मान्य मानव है। हाँ, इस युग के लोग मानव होने से पहले ही विश्व-मानव है।"

हमारे मेस मे अजीब आबोहवा रहती है। बारह महीने मे भी कोई दिलचस्प घटना नही होती, पर लोग इसकी पूर्ति दिलचस्प आलोचनाओ से कर लेते है। जगबन्धु ने खाने के बाद फिर परकीया-तत्व छेड दिया।

नीहार ने साथ दिया। बोला—"उदाहरणस्वरूप साली को लो,

आइ लव यू.

वह परकीया है, इसमे सन्देह नही। पर साली से 'सिस्टर-इन-ला' बड़ी होती है, क्योकि यह नाम भी दूसरों की भाषा का है।"

राजनैतिक क्षेत्र मे काम करने वाला राजीव बोला—"बहू कहने से कुछ रस नही मिलता, पर सजनी कितना अच्छा शब्द है। इससे भी अच्छा शब्द है डार्लिंग। विश्व-प्रेम का यही तो अर्थ है कि दूसरो की चीज को अपनाओ और अपनी छोडो।"

नीहार ने सम्पूर्ण रूप से इसका समर्थन किया, बोला—"साली से सिस्टर-इन-ला कानून मे ज्यादा मुआफिक आती है। मै प्रेम करता हूँ, यह कहने की अपेक्षा 'आई लव यू' कहना अधिक प्रिय मालूम होता है। इसमे न मालूम क्या व्यजना आ जाती है और सागर-पार की न मालूम कितनी ही नायिकाये आँख के सामने नाच उठती है।"

एक ने पूछा—"जरा व्याख्या के साथ कहिए।"

नीहार बोला—"विवाह नामक स्वार्थी और आत्मनेपदी कार्य के पहले सभी स्त्रियाँ परस्मैपदी यानी बहुत प्रिय रहती है और उनकी बहिने भी। याने उनकी बहिने विश्व-भगिनी की तरह मीठी अर्थात् पचशर का लक्ष्य-स्थल रहती है।"

जगबन्धु इन बातो को सुनकर कुछ अकचका गया। सब लोग उस पर हँस रहे थे, इसलिए उसने अपने ऊपर से दूसरो की दृष्टि हटाने के लिए 'टेम्पेस्ट' पुस्तक के अन्दर से एक लिफाफा निकाला। पढने-लिखने मे वह फिसड्डी था, इसलिए वह हर समय पुस्तक साथ रखता था। शायद वह समझता था कि पुस्तक साथ मे रहने से उसका कुछ न कुछ अक्स उस पर पडेगा और देवी सरस्वती की कृपा हो जायेगी। उसने सीना तानकर कहा—"यह देखो क्या चीज है?"

एक मित्र ने व्यग से कहा—"टेम्पेस्ट के अन्दर से और क्या निकलेगा? बहुत होगा तो 'टी पाट' निकलेगा। कहते है न 'टेम्पेस्ट इन ए टी-पाट'।"

जगबन्धु बोला—"नही, ऐसी कोई बात नही।"

सब लोग दौडकर छीनाझपटी करने लगे। उसमे एक फोटो निकला और वह फोटो नई दुलहिन सुरधुनि का था। इसमे कोई सन्देह नही कि बडी दिलचस्प चीज थी। एक तो पर-चर्चा और तिस पर भी मित्र की दुलहिन। सबसे मजेदार बात यह थी कि यह

फोटो उडाया हुआ था। प्रद्युम्न ने बडे साहस से यह फोटो लिया था। बात यह है कि दिन मे फोटो लेना सम्भव नही था और रात मे फोटो लेना उसकी फोटोग्राफी विद्या के बाहर था। सुरधुनि पान बना-कर उठी ही थी कि उसका फोटो ले लिया गया था। पति को दिन मे देखकर घूँघट काढने ही वाली थी, पर साथ ही साथ चेहरे पर खुशी थी। इसी अवस्था का फोटो था और उसमे लज्जा, खुशी, घबराहट, सभी का एक अपूर्व सम्मिश्रण था।"

होमाग्नि से सहन न हुआ। वह कमरा छोडकर चला गया।

चित्र को लोगो ने तरह-तरह से घुमा-फिराकर देखा। एक मित्र ने कहा—"हूबहू हमारी सहपाठिनियो जैसी है! दुलहिन हो तो ऐसी हो।"

नीहार ने प्रतिवाद करते हुए कहा—"न कुछ जानो, न बूझो, बेकार मे बाते बघारते हो। कैसी दुलहिन होनी चाहिए, इस सबध मे तुम्हे कुछ भी ज्ञान नही है। ख्वामख्वाह मित्र की स्त्री को घसीट रहे हो।"

इसके उत्तर मे उसी मित्र ने कहा—"वाह यह भी कोई बात है, जो न जानूँ। एक श्रेणी मे बैठकर जब तरुण और तरुणियाँ शिक्षा ग्रहण करती है, तो तरुणियो को देखकर यह अनुमान लगाना कठिन थोडे ही है कि दुलहिन कैसी होनी चाहिए।"

"कठिन हो या न हो, तुम कर नही पाते, इतना मै कह सकता हूँ, नही तो मित्र की स्त्री का फोटो लेकर छीनाझपटी न करते। दूसरो से उधार ली हुई रोशनी से तुम इसलिए चकाचौध हो जाते हो, कि तुम मे स्वय रोशनी का अभाव है। हमारी सहपाठिनी मिस बटव्याल को तुम दूर ही से देखते हो, जैसे हरिजन मन्दिर के बाहर से मूर्ति को देखते है। अधिक से अधिक तुमने इस प्रकार की धारणाये बनायी है कि वह गहने न पहिने, लम्बा घूँघट न काढे और बडे घर की स्त्रियाँ जैसे बोलती-चालती है वैसे ही और उसी 'ऐक्सेन्ट' मे बोले-चाले। और भी कुछ सीखा है? यह तो केवल बहिरग हुआ।"

जगबन्धु ने बाधा देकर कहा—"राजीव तो बहुत सी स्त्रियो के सम्पर्क मे आ चुका है।"

पर उत्तर केशव ने दिया—"इसी कारण वह स्त्रियो का वर्णन करते समय किसी तरह रगीन भाषा से काम नही लेता। वह तो उन्हे मानवी करके दिखलाता है।"

जगबन्धु नाराज हो गया। बोला—"मै रगीन भाषा से काम लेना चाहता हूँ, पर मौका तो मिले।"

एक ने व्यग किया—"शायद इसमें दोष सहपाठिनियो का है। क्यो ऐसी ही बात है न ?"

"अवश्य। स्त्रियाँ जिस प्रकार से उपेक्षा और निस्पृहता दिखलाती है, उसमे उन्ही की हानि है। यह माना कि सभी पुरुष इस योग्य नही होते कि उनका आदर किया जाय, पर कोई भी पुरुष आदर-योग्य नही है, यह भी हद है। यदि स्त्रियो ने यही रुख कायम रखा तो पुरुष सत्याग्रह करने के लिए मजबूर हो जायँगे।"

भोजन से रूठ जायँगे.

स्त्रियो का पक्ष लेकर राजीव ने जवाब दिया—"उनका भी कोई दोष नही। अपनी बडी बहिनो की अभिज्ञता से इनको यह ज्ञात हो गया है कि विवाह से पूर्व जो पुरुष प्रेम निवेदन करते समय कहता रहा है कि मै तुम्हारे योग्य नही हूँ, वही मनुष्य विवाह के पश्चात् इस वाक्य को सत्य प्रमाणित करने की बहुत चेष्टा करता है।"

केशव ने कहा—"भाई साहब सोच-समझ कर बात करो। यदि बिना सोचे-समझे अपनी स्त्री के सामने ऐसा ही कुछ कह डालोगे तो तुम्हारी क्या अवस्था होगी, यह भी याद रखना।"

जगबन्धु झटपट बोला—"अवस्था और क्या होगी, आदि काल

से जो अस्त्र हमारे पास है वही चलायेंगे, याने हम भोजन से रूठ जायँगे ।"

रात बहुत हो गयी थी। उठते समय दार्शनिकता के साथ नीहार अपने मन ही मन बोल उठे—"उस अस्त्र से सामयिक विजय तो प्राप्त हो सकती है पर याद रक्खो, जिस बात को ईश्वर क्षमा करते है और पुरुष भूल जाता है उसी को नारी सदा के लिए याद रखती है ।"

पुस्तक की जिल्द मे शायद बालो के तेल का दाग लग गया था। बालो के तेल का ही दाग था, यह कौन कह सकता है ?

ऐसी कोई खास बात नही थी, पर इसी पर सनसनी फैल गयी। जगबन्धु ने झट से प्रद्युम्न की पुस्तक छीन ली और वह उसे सूँघने लगा।"

"अजी शार्लक होम्स, क्या सूंघ रहे हो ?"

"नही, नही, शार्लक होम्स नही, उसका डाश शन्ड कुत्ता ही इस काम को कर सकता था।"—बीच मे बोलते हुए नीहार ने कहा।

नीहार समझ गया था कि क्या मामला है। अभी न मालूम क्या तमाशा बने। मित्र को लक्ष्य बनाकर श्रेणी के बडे-बडे लडके चाँदमारी करेंगे, और सो भी लडकियो के सामने, इसलिए कुत्ते का प्रसग छेडकर उसने रुख बदलना चाहा।

पर रुख इतनी आसानी से नही बदला करते।

इस उम्र के लडके न तो इतने कच्चे होते है और न इतने मुलायम। झासा देकर उन्हे भटका देना आसान नही।

जिस दिन प्रद्युम्न की पुस्तको पर नयी साफ-सुथरी जिल्द रहती है, याने जिस दिन उन पर कोई दाग नही रहता उस दिन जगबन्धु-कम्पनी यह टिप्पणी करती है कि दुलहिन पुस्तको के साथ सौत का व्यवहार करती है, नही तो उन पर मीठे हाथ का स्पर्श या मीठे बालो का कोई दाग क्यो नही है।

इसी प्रकार जिस दिन प्रद्युम्न अच्छी तरह पाठ याद करके आता है, (प्रश्न करके साथी उसका पता लगा लेते है) उस दिन वे यह उपसहार निकालते है कि दुलहिन ने प्रद्युम्न का बाइकाट किया, इसीलिए यह बात सम्भव हुई। नही तो नयी दुलहिन पास मे और सबक याद हो, यह कोई सोच सकता है ? यह तो असम्भव बात है।

यदि किसी दिन प्रद्युम्न देर से आता, तो यह बात भी विवाह के मत्थे ऐसे मढ दी जाती मानो जो लोग अविवाहित है, वे कभी लेट होते ही नही।

यदि वह मन लगाकर अध्यापक का व्याख्यान सुनता तो उसकी व्याख्या की जाती कि वह विगत रात्रि की घटनाओ को भूलने की चेष्टा कर रहा है और यदि वह मन लगाकर व्याख्यान नही सुनता, तो उसका यह मतलब निकाला जाता कि रात को कुछ तकरार हो गयी होगी। प्रद्युम्न अपने मित्रो की इन आलोचनाओ को नापसन्द करता हो, ऐसी बात नही। इनमे न मालूम कैसी सौधी-सौधी खट्टी-मीठी चटपटी चटनी का स्वाद आता था। उसकी शादी हुई है इससे उसके मित्र कभी जल नही सकते। उसका सुख देखकर भी नही ज़लते थे। क्योकि ऐसे जलने की आदत हमारे मे नही है अपितु हमारे पड़ोसियो मे है।

पर आज तेल के दाग के सम्बन्ध मे बहुत अधिक बाते हो गयी। पीछे की सीट के एक स्थायी अधिवासी ने आवाजकशी की—"तेल का दाग तो बहुत मामूली बात है। यदि यह काड विलायत मे होता तो होठो का सिदूर मिलता—चैरी की तरह लाल होठो का सिदूर।"

इस प्रकार के वक्तव्य से मित्रमण्डली नाराज हो गयी, यह देखकर वह छात्र बोला—"विलायत मे तुम्हे शादी भी नही करनी पडती। वहाँ तो यो ही सब चीजे मिल जाती है। इस देश मे यदि एक आध हम मे से शादी न करे तो हम लोगो की क्या हालत होगी ?"

हरिहर नाराज हो गया। बोला—"आप इतनी बकबक कर रहे है, आप स्वय शादी क्यो नही कर लेते ?"

वह छात्र सीना फैलाकर ऐसे खडा हो गया मानो इनकलाब के सम्बन्ध मे व्याख्यान दे रहा हो, बोला—"मै और शादी! शादी तो पुराने ढग के दकियानूसी लोगो के लिए है, विवाह के अलावा जिनके लिए कोई गति नहीं है। एक से गठबन्धन करके रहना बिल्कुल सकीर्ण चित्त का परिचय देना है। नये युग मे इस प्रकार की सकीर्णता त्याज्य है। हम लोग नवजीवन-प्राप्त तरुण है। फिर हम शादी करके अपनी जिन्दगी को खटाई मे क्यो डाले, हम लोग तो गेद से खेलकर ही खुश

है। गोल करने मे विश्वास नही करते, गोल किया तो सब खतम है।"

जगबन्धु की जल्दी ही शादी होने वाली थी। बोला—"नही आप तो मधुकर है मधुकर, फूलो का रस लेते फिरते है। मधुकर नही, जोकर।"

उधर से उस छोकरे ने कहा—"आखिर इसमे बुराई क्या है ? गीता मे कहा है कि कर्म मे तुम्हारा अधिकार है, फल मे नही। हम नये जमाने के सिपाही है, तुम इससे भी आगे जाते हो। हमारा यह कहना कि फल की हम परवाह ही नही करते और न हम फल चाहते है।"

हरिहर बोला—"एक पूस मे जाडा नही कटता। अभी ठहरो जब कॉफी हाउस से लेक तक रुआसे फिरते रहोगे, तभी पता लगेगा कि आटे-दाल का भाव क्या है। तुम्हारी तरह क्रान्तिकारी बनाने वाले लोग भी अत मे शादी करते है।"

इस पर वह छोकरा दूसरे ढग से बोल उठा—"देखिये पढने-लिखने मे मै पुराना होते हुए भी सबसे पीछे हूँ, इसमे मेरी तकदीर ने साथ नही दिया, इसलिए बहुत सम्भव है कि शादी के मामले मे तकदीर मेरा साथ दे।"

"इसका क्या अर्थ हुआ ?"

"इसका अर्थ यह हुआ कि यदि किसी दिन मै प्रेम के अहमकपने में फँस जाऊँ, तो मै अपने रकीबो पर विजयी हो जाऊँगा।"

"तो इसका मतलब हुआ कि आप जिस शादी की बुराई कर रहे है, उसी मे फँस जायँगे ?"

"नही, मेरा मतलब हरगिज यह नही है। रकीबो पर विजयी होने का अर्थ ब्याह के जजाल मे फँसना नही है। मुझे सभ्य नागरिक होने का कोई लोभ नही। लाभ पर दृष्टि है, लोभ क्यो करूँ ?"

"लाभ तो इसी मे मालूम होता है कि जिससे आप प्रेम करे, उसे अपना बना ले।"

"अपनी-वपनी कोई नही बनती। गले मे पत्थर के समान हो जाती है। छोटे हिटलर कहिये तो ठीक है। दिन को हिटलर और रात को मुसोलिनी, मूसलो की मार के मारे जान आफत मे रहती है।"

कहते-कहते उस छोकरे ने देख लिया कि नीहार और प्रद्युम्न वहाँ से खिसक गये है। इससे उसका साहस और बढा। बोला-

नात्सी सेनापति.

"उस दिन आपने उस मकान मे, जहाँ शादी हो रही थी, एक लडाका औरत को नही देखा? बिना हथियार के सिर काटने को तैयार थी। र्शतिया कहता हूँ कि श्रीमती हिटलर के जीवन का लक्ष्य है नात्सी सेनापति बनना, यानी उनके घर मे कम से

कम एक दर्जन पोते-पोतियाँ होने चाहिएँ, जिनके शोर-गुल से प्रेम मरकर और भूत बनकर जान बचाने को भागेगा। गृहस्थ संन्यासी बनकर निकल जायगा। बच्चो को न तो डॉट सकेंगे और न सँभाल सकेगे। 'घर मे होगा पूर्ण स्वराज्य'—यह है हम लोगो की गृहस्थी।"

घर मे होगा पूर्ण स्वराज्य.

उस छोकरे ने जो बात कही थी, उसमे सचाई का पुट था। पर कड़ुए शब्द सत्य होने पर भी सहे नही जाते। बहुत से मित्र इन बातो को नापसन्द करते हुए खिसक गये। छोकरे ने यह सोचा कि यदि उसने व्याख्यान जारी रक्खा, तो उसे शायद खाली बेंचो और मेजो

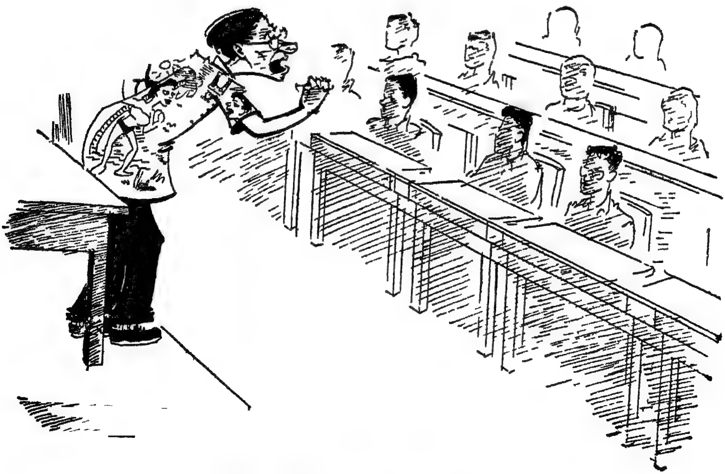

अरे नवीन ! अरे कच्चे !...

के सामने बोलना पडे। इसलिए जो कुछ कहना है, उसे जल्दी कह डालने की जरूरत है। वह बोला—"कवीन्द्र ने क्या खूब कहा है—'अरे नवीन! अरे कच्चे! नवीन हम इस माने मे है कि अभी हम यौवन से दूर है, कच्चे इसलिए है कि अभी हम मीठे नही है। इसलिए सब्र का फल मीठा है, इस कहावत के अनुसार हम प्रतीक्षा कर रहे है। इसके बाद हम मोर की तरह पूँछ उठाकर नाचते रहेगे। तब सभी समझेगे कि हिटलर सब कुछ कर सकता था पर नये युग के तरुण के प्रेम को नही रोक सकता था।"

अन्त मे सभी बाते नीहार के कानो मे पहुँची। उसे बहुत बुरा लगा कि मित्रमण्डली मे प्रद्युम्न के सम्बन्ध मे इस प्रकार की बाते उड रही है। इस प्रकार मजाक उडाने वालो के थप्पड मारने की इच्छा होती थी पर निन्दको की सख्या बहुत थी। एक-दो निन्दक होते तो उनसे निपटा जाता, पर इतनो से कैसे निपटा जाय ?

फिर किसी से इस सम्बन्ध मे झगडने का अर्थ आग मे घी डालना होता फलत और अधिक निन्दा होती। सम्भव है कि सख्ती से पेश आने पर प्रद्युम्न को कालिज छोडने की नौबत आती।

इन बातो से भी नीहार को अधिक फिक्र इस बात की हो रही थी कि प्रद्युम्न का मन अभी कच्चे घडे की तरह था और विवाह के बाद से वह एक कच्चे खिलाडी की तरह चल रहा था। कहा गया है कि विवाह एक बहुत बडा स्पोर्ट है और यह स्पोर्ट ही जीवन की लीला है। लडकियो का मन पद्म की तरह होता है। सूर्य की रोशनी से, वायु के झोको से, पानी की फुहारो से उसे जगाना पडता है। तभी जीवन मे पद्म के फूल खिलते है।

नीहार सोचने लगा। पहले के जमाने मे नई बहू अपने मन की कली खिलने के पहले ही पति-गृह मे आ जाती थी। इसका नतीजा यह होता था कि उसे चाहे जिस प्रकार ढाला जा सकता था, पर अब यह बात नही होती। कली पहले से ही खिल चुकी होती है, उसका ढग ढर्रा पहले ही बन चुकता है। सुरधुनि स्वतन्त्र वातावरण से आयी थी और यहाँ आकर वह एकदम सौ साल के पहले के भभकदार वातावरण मे आ फँसी। शादी एक ऐसे सुशील और सुबोध बालक के साथ हुई कि वह उस वातावरण की घुटन मे घुट-घुट कर मर जायगा, पर बाहर की हवा मे निकलने का साहस नही करेगा। द्विविधा और लज्जा इनके सिवा कुछ नही था।

मित्र को इस सम्बन्ध मे कुछ मदद देने की जरूरत थी। यह काम और कोई नही कर सकता था, इसलिए नीहार ने ही अपने ऊपर यह काम ले लिया। जैसा रोग, वैसी ही उसकी दवा भी चाहिए।

जिस समय नीहार इस प्रकार सोच रहा था, उसी समय स्वय प्रद्युम्न वहाँ पर आ गया। उसके चेहरे पर आषाढ और आँखो मे भादो दृष्टिगोचर हो रहा था। पानी के पूरे आसार थे, पर कितना पानी था, यह कौन जाने।

नीहार समझ गया कि कोई इसी प्रकार की छोटी सी घटना हुई है, जिसके कारण मित्र की हालत ऐसी हो गई है। शायद कोई ख़ास बात न हो, पर शादी के बाद परिस्थिति इस प्रकार हो रही थी कि कोई भी घटना चिनगारी का काम कर सकती थी। इस परिस्थिति मे जरा-सी बात मे सन्तुलन खो जाने का डर था। भला नीहार वह परिस्थिति कैसे लाये, जिसमे वह पैरो का सन्तुलन कायम

शादी का सन्तुलन.

रक्खे और साथ ही साथ हवा मे उडे। प्रद्युम्न इस काम मे बिल्कुल अपटु सिद्ध हुआ था। साथ ही उसकी दुलहिन भी घुट-घुट कर मर रही थी।

इस सन्तुलन वाली बात को न समझने के कारण या समझकर

भी उसे कायम न रख पाने के कारण कई बार जीवन नष्ट हो जाते है। नीहार भी खिलाडी था, उसने पहले तो बहुत छूट दी और इधर-उधर की बाते करने लगा। अन्त मे असली बात खुल गयी।

घर के सब लोग नाटक देखने गये थे। प्रद्युम्न भी बुलाया गया था, पर उसे नीचे स्टाल मे बैठना पडा था। नीहार समझ गया कि मामला क्या है। बोला—"तो ऐसा करने मे तुम्हे आपत्ति क्या थी? तुम फर्श पर तो नही बैठाये गये? फिर तुम्हे फिक्र क्या थी? मजे से नाटक देखते और बगल मे दूसरे सगी-साथी तो थे ही।"

इसके उत्तर मे प्रद्युम्न ने कुछ नही कहा, और वह एक किताब लेकर उसे देखने लगा। नीहार को एकाएक स्मरण हो आया कि अभी दो-तीन दिन पहले राजीव नामक छात्र ने लोगो को यह सुनाया था कि किस प्रकार उसने स्टाल मे बैठकर एक गर्ल 'फ्रैंड' से सटकर सिनेमा देखा था।

शायद इसी कारण प्रद्युम्न को अफसोस था। पर नीहार यह कह सकता था कि गर्ल 'फ्रैंड' के साथ राजीव का सटकर बैठना और प्रद्युम्न का अपनी पत्नी के साथ सटकर बैठना दो भिन्न बाते थी। एक क्षणिक सम्बन्ध था, जब कि दूसरा सम्बन्ध जीवन भर का था, इसलिए सिनेमा के अन्दर सटकर बैठे तो क्या और न बैठे तो क्या? इससे कुछ आता-जाता नही था। जहाँ सब कुछ प्राप्त है, वहाँ कुछ के लिए फिक्र करना बेकार है। जिसे सब कुछ प्राप्त है वह स्टाल मे बैठकर शान्ति से नाटक देखे। तर्क का कहना यही था। यदि बगल मे कोई बैठी है और बीच-बीच मे कनखियो से उसे देखना है, तो रगमच वाले नाटक का रस नष्ट हो जाता है। हॉ, यह कहा जा सकता है कि नाटक ज्यादा महत्त्वपूर्ण है।

सोचने को तो नीहार इन बातो को सोच गया, पर दर्शनशास्त्र से न तो पेट भरता है और न मन का मैल ही दूर होता है। तथ्य यह था कि जब प्रद्युम्न ने यह व्यवस्था देखी, तब वह नाटक देखने ही नही गया।

नीहार ने पूछा—"आखिर तुमने न जाने का बहाना क्या

बनाया ?"

"बहाना यह बनाया कि तुम्हारे यहाँ रात को न्यौता है ।"

नीहार ने कहा—"यह अच्छी बेवकूफी रही । नाटक देखते तो मन बहलता, इस प्रकार कुढने से क्या फायदा है । हर हालत मे अपने को ताजा रखना चाहिए । चोर पर क्रोध करके फर्श पर रोटी खाना कोई अक्ल की बात नही कही जा सकती ।"

"क्यो ? यहाँ तो मै ही चोर बना हुआ हूँ ।"

"तुम खुद ही चोर बनकर कोने मे जा छिपोगे, तो मारे भा तुम्ही जाओगे । तुम अपनी इस मनोवृत्ति को छोड दो । तुम चोर नही, मालिक हो । जिस चीज की तुम्हे आवश्यकता है, उसे सरलता से माँगो, यह नही कि ख्वामख्वाह पीछे हट जाओ ।"

प्रद्युम्न को इस बात से कुछ ढाढस नही बँधा । बोला—"मालिक समझने से ही कोई मालिक नही हुआ जाता ।" नाटक मे जाने के पहले सुरा एक बार कमरे मे आयी थी, पर कुछ बोली नही ।

नीहार खुशी मे बोल उठा—"आयी थी, इसके माने यह हुए कि तुम जो चाहते थे, वह तुम्हे फौरन मिलता । पर मुँह खोलकर माँगते, तब न होता ? बिना माँगे तो माँ लडके को दूध भी नही पिलाती ।"

प्रद्युम्न बोला—"मेरी तो कुछ समझ मे नही आता । मै जब तुम्हारे यहाँ के बहाने से आ रहा था, तभी वह आयी । मै कुछ सोच रहा हूँ या नही सोच रहा हूँ, इसकी उसे परवाह नही थी । बाहर जो लोग उसका इन्तजार कर रहे थे और शोर मचा रहे थे, उन्ही की तरफ उसका ध्यान था ।"

"तो वह बेचारी क्या करती ? यदि तुम उसका हाथ पकडकर कहते कि सिर-दर्द का बहाना बना दो और कहो कि मै नही जाती, तो फिर तुम्हारा काम बनता, पर कोई रुख तो दिखाते ।"

प्रद्युम्न मान गया कि उसने इस प्रकार की कोई भी युक्ति नही की। नीहार बोला—"तुमने यह भी तो नही कहा कि चलो हम लोग चुपके से कही टहलने चले जायँ । यदि कहते तो देखते ।"

प्रद्युम्न ने यह भी माना कि उसने ऐसा भी नही किया । नीहार

प्रोत्साहित होकर बोला—"तुम्हे चाहिए था कि सब के सामने उसका हाथ पकडकर घसीट ले जाते, और सामने जो भी टैक्सी मिलती, उसी पर चढ बैठते और ड्राइवर से कहते, चलाओ ।"

प्रद्युम्न के मानसिक नेत्रो के सम्मुख उस समय कौशल्या फूफी तथा जेल की अन्य पहरेदारिनो का चित्र आ गया । नीहार बोला—"तुम निकम्मे हो, तुमसे कुछ नही होने का । तुम बिल्कुल दुधमुँहे बनते हो और यह चाहते हो कि सुरधुनि हाथ पकडकर तुम्हे रास्ता दिखलाये । ऐसा नही होता ।"

प्रद्युम्न चुप रहा । वह धीरे से निकल गया । नीहार ने बहुत पुकारा, पर वह नही रुका । अन्त मे नीहार दौडकर गया और उसे हाथ पकडकर लौटा लाया । बडी देर तक दोनो मित्र चुपचाप बैठे रहे । फिर एकाएक नीहार उठा और अपने मित्र को झकझोरते हुए बोला—"विद्रोह कर सकोगे, विद्रोह ? रिवोल्ट ? बोलो ।"

प्रद्युम्न ने आँखे बडी कर ली । पर कुछ बोला नही । समझ मे आ गया कि उससे कुछ नही होगा । तब नीहार बोला—"विद्रोह तुम्हारे वश का नही है । पर कुछ करना तो जरूरी है, इसलिए तुम ठडे जल का प्रयोग करो, उसी से काम बनेगा ।"

प्रद्युम्न ने आँखे बडी कर ली और बोला—"किसको ठंडे जल के प्रयोग की आवश्यकता है ? मै तो देख रहा हूँ कि तुम्हारा ही दिमाग गरम हो रहा है ।"

नीहार ने और भी स्पष्ट करके कहा—"तुम्हारे घर मे जितने भी लोग तुम्हारा मजाक उडाने के लिए तैयार रहते है, उनके सिर पर ठडा पानी डालो यानी उनकी कतई परवाह न करो । जो तबीयत मे आये सो करते जाओ, चाहे किसी को भला लगे या बुरा ।"

"तुमने कहने को तो कह दिया, पर करना उतना आसान नही है । जरा समझकर देखो ।"

नीहार ने जब देखा कि ऐसे काम नही बनता, तो उसने ब्राउनिग की एक कविता के सम्बन्ध मे एक कहानी सुनायी । भला इस मौके पर ब्राउनिग को क्यो घसीटा गया, यह तो नीहार ही जाने, पर

अग्रेजो को मालूम होता कि इस तरह उनके प्रिय कवि को एक मामूली घरेलू झगडे मे अप्रासगिक ढग से याद किया गया है, तो उन्हे बहुत आश्चर्य होता। खैर, इस बात को जाने दीजिये। देखा जाय कि कहाँ तक यह कहानी समयोपयोगी थी।

ब्राउनिग की एक कविता मे यह कहानी आती है कि एक इटालियन ड्यूक फर्डिनन्ड रिकार्डी एक दूसरे ड्यूक की पत्नी से प्रेम करता था। अपनी प्रेमिका की एक झलक पाने की आशा मे रिकार्डी उस ड्यूक के झरोखे के पास से निकलता था। ड्यूक-पत्नी भी रोज दिखायी पडती थी। घनिष्ठता बढी और अन्त मे दोनो ने तय किया कि भाग चलना चाहिए। पर साहस ने साथ नही दिया और दोनो का मिलन नही हो सका। बाते सब आँखो-आँखो मे ही हो जाती थी। अन्त मे यौवन का स्वप्न धूमिल होने लगा। इस कारण ड्यूक पत्नी ने झरोखे मे दर्शन देने के बजाय वहाँ अपनी एक सगमरमर की मूर्ति रख दी। रिकार्डी ने भी बाग मे अपनी मूर्ति रख दी। अब बताओ कि इस प्रेम से क्या हासिल हुआ?

नीहार ने व्याख्या करते हुए कहा—"तुम लोगो के जीवन मे भी इसी प्रकार व्यर्थता आ जायेगी। ब्राउनिग ने कहा कि अनन्त प्रेम का इस प्रकार का छोटा-सा परिणाम पाप है। दोनो का पूर्ण मिलन नही हुआ। हृदय के अन्तरतम प्रकोष्ठ मे मणि के दीप नही जले। जीवन एक अभिशाप-सा बना रहा। हमारे यहाँ जिन घरो मे अभी सयुक्त परिवार प्रथा बनी है वहाँ नवदम्पति का जीवन अभिशाप बना रहता है, मानो उन्होने कोई पाप किया हो। पता नही बडे लोग अपने लडको और पतोहुओ से किस बात का बदला लेते है। जीवन खिल नही पाता। इसके विरुद्ध विद्रोह किये बिना काम नही चलेगा।"

प्रद्युम्न बोला—"मै सभी बाते समझता हूँ पर करूँ तो क्या करूँ, कुछ करते नही बनता।"

नीहार बोला—"पर मित्र, बिना विद्रोह किये भी तो काम नही चलेगा। सुरधुनि को भी समझाओ।"

प्रद्युम्न मलिन हँसी हँसकर बोला—"मामूली विद्रोह से कुछ भी नही होगा। यह ऐसी दीवार है कि भले ही धँस जाय, पर रास्ता नही छोडेगी।"

नीहार बोला—"मै तुम्हारे इस निराशावादी मत से सहमत नही हूँ। यदि यह दीवार रास्ता नही छोडती तो फिर इसे तोडकर ही दम लेना पडेगा।"

"यह मेरे वश की बात नही है। फिर सुरधुनि को कौन सीख दे? तुम से हो सके तो दो।"

यहमैने सब कुछ सोच लिया है। मायके की कन्या और होती है और ससुराल की बहू और। एक तो जैसे प्रात काल का कमल है, और दूसरी सन्ध्या का सूर्यमुखी। एक दिन की हँसी और आलोक मे जगती रहती है, और दूसरी अँधेरे मै मुँह छिपाकर आँख बन्द करती जाती है। इसलिए सुरधुनि को मायके से तैयार करना पडेगा। तुम शुक्रवार शाम के समय उसे लेकर ससुराल चले जाओ। बाकी सब जिम्मा मेरा है। शनिवार और इतवार इन दो दिनो में तुम दोनो के मनो को बदलना पडेगा।"

"अच्छा यह बात है, तब मुझे क्या करना होगा?"

"वह बाद को बताऊँगा। एक स्त्री से कुछ सलाह भी करनी है। स्त्रियाँ ही स्त्रियो को अच्छी तरह समझती है। उसे मै इस षड्यन्त्र मे शामिल कर रहा हूँ। बता दूँ वह कौन है? वह मेरी भाभी की बहन मीनू है। बडी चालाक लडकी है, जैसे दुधारी छुरी हो या आग की चिनगारी।"

धीरे-धीरे सुरधुनि के सिर पर से घूँघट उतर गया। वे लोग ईडन गार्डन मे क्रिकेट टेस्ट देखने गये हुए थे। टिकट पहले से ही खरीद लिये गये थे। सीट रिजर्व थी, फिर भी भीड के मारे क्यू मे खडा होना पडा। धक्कम-धक्का हो रहा था। शोरगुल तो था ही साथ ही तरह-तरह की टिप्पणियाँ भी चल रही थी।

तरह-तरह की हल्की बातचीत सुनते-सुनते सुरधुनि के मन ने पख पसारकर उडना चाहा। उसका घूँघट तो पहले ही उतर चुका था, अत वह और भी लापरवाह हो गई। चारो तरफ की कुर्सियो मे कितने ही पुरुष और स्त्रियाँ जमा थी। सुरधुनि इनमे से एक थी। सब की बातचीत कानो मे आ रही थी। कई लोग उसे एकाएक देख भी रहे थे। बाग बाजार दिमाग से उड गया।

नही, बाग बाजार उडा कहाँ? हमारे खिलाडी विपक्षियो की गद को रसगुल्ले की तरह उडाते जा रहे थे। सुरधुनि के बिल्कुल पीछे ही एक छोटे भैया और उनकी गर्ल फ्रैंड बैठी थी। वे लोग बराबर कुछ बाते करते जा रहे थे। ऐसा मालूम होता था कि शर्म और हया उन्हे छू भी नही गयी है। हमारे फील्डर नन्दलाल की तरह मतवाली चाल से चल रहे थे, मानो वे गौ चरा रहे हो, न कि क्रिकेट का खेल खेल रहे हो। इस चाल-ढाल को देखकर पीछे वाली वह लडकी बेहाल हो गयी और उसने गुनगुनाना शुरू किया—

"मोहन मोसे करत रार "

छोटे भैया भी क्यो पीछे रहते। उन्होने भी अलापना शुरू किया—"बहियाँ पकर "

सुरधुनि ने एक बार पीछे की ओर मुडकर देखा, फिर वह स्वय ही शरमा गयी। इन लोगो को कोई लज्जा तो है नही। लडकी मुहल्ले के नाते भैया लगने वाले किसी के साथ आयी थी और फिर

दोनो एक साथ तान मिलाकर गा रहे थे। इस बीच मे और एक कोड हो गया। हमारी तरफ के एक खिलाडी ने मानो मक्खन सने हुए हाथ से आकाश के चॉद की ओर देखा। पर वह तो चॉद नही बल्कि एक बहुत मामूली गेद थी। पर जिसके हाथ मे मक्खन लगा हो (वह मेहदी लगने के ही तुल्य है) वह भला गेद कैसे पकडता ? नतीजा यह है कि गेद मध्याकर्षण के नियमो से नीचे जा गिरी। मायावी गेद का हमारे खिलाडी कहॉ तक पीछा करते। वह तो हमारे खिलाडी पुगव के दोनो हाथो के बीच से मानो जगत की अनित्यता दिखाते हुए जा गिरी। मामूली बात थी, पर पीछे से वह लडकी सिर का जूडा खोलकर खडी हो गयी। और खिलाडी को सम्बोधित करते हुए बोली—"निकल जाओ गेट आउट !"

सब लोगो ने कनखियो से और शायद कुछ नाराजी से उस तरुणी को देखा, परन्तु उसको इसकी जरा भी परवाह नही थी। वह तरुणी कन्धे हिलाकर और जूडा मटकाकर बैठ गयी। नही, वह स्वय नही बैठी, बल्कि काले चश्मे वाले उस छोटे भैये ने उसे खीचकर बैठा दिया।

बगल के दर्शक ने चने-मुरमुरे चबाते-चबाते कहा—"वे लोग कृपा करके बम्बई, मद्रास, नमालूम कहॉ-कहॉ से खेलने आये है, यही हमारा सौभाग्य है। नही तो टेस्ट मैच होता कैसे ? इसलिए बहनजी जरा बॉध के।"

एक अपरिचित व्यक्ति से इस प्रकार टिप्पणी सुनकर बहनजी बिल्कुल नही घबरायी बल्कि, वह जिनका नाम मीनू था, और इस मामले को इतनी आसानी से जाने देने वाली नही थी, वह झुँझलाकर बोल उठी "हमारे यहॉ के लोगो का पुरुषार्थ इतना ही है कि पैसे खर्च करके दूसरो के खेल देखे और दूसरो की बाते सुने। न धूप मे दौड़े और न खेत मे मेहनत करे। यह तो भले लोगो का काम नही। इससे बेहतर है चने-मुरमुरे चबाना।"

चने-मुरमुरे खाने वाले व्यक्ति का यह हाल हुआ कि काटो तो खून नही। पहले टिप्पणी करते समय उसकी बॉछे खिल गयी थी,

पर अब उस पर स्याही-सी फिर गयी। सुरधुनि ने यह सब देखा, और मन ही मन उसने मीनू की तारीफ की।

उधर मुहल्ले के नाते भैया भी छोडने वाला नही था, वह बोल उठा—"तुमने ठीक कहा है। हम लोग भी अजीब लोग है। 'कही की ईट, कही का रोडा, भानमती ने कुनबा जोडा' के अनुसार यह टीम इकट्ठी हुई, और हम लोग पैसे देकर आ गये बन्दर का नाच देखने।"

"हम लोगो के लिए कोई आशा नही मालूम होती। यदि लडकियाँ छत पर हवा खाने जाती है तो फौरन लडको को भी ताजी हवा की कमी महसूस होती है। फिर भी अगर लडकियाँ हिम्मत के साथ कुछ दिन छत पर फिरती रहे तो लडके दुरुस्त हो जायँ। पर लडकियाँ तो शर्म के मारे घबराती रहती है।"

मुहल्ले के नाते वाले भैया ने पूछा—"और लडके ?" इस पर उस लडकी ने कहा—"ये लडके भी कितने डरपोक होते है। यदि उन्हे घूरना है तो अच्छी तरह घूरे। कोई हम कपूर की बनी हुई नही हैं कि उड जायँगी। यह ख्वामख्वाह की लुका-चोरी अच्छी नही लगती।"

इसी प्रकार कुछ न कुछ बातचीत चलती रही और उधर खेल चलता रहा। हमारे अतिथि खिलाडियो का खेल समाप्त हुआ और हमारे बैट्समैन आगे आये। पर हमारे खिलाडी वसुधैव कुटुम्बकम् मत के थे, इस कारण वे विकेट पकडकर पडे रहने वाले नही थे। वे चाहते थे कि दर्शको को बाकी खिलाडियो का खेल देखने का मौका मिले। इस कारण वे जल्दी-जल्दी विकेट छोडकर मरने लगे।

अकस्मात् पीछे से कोई बोल उठा—"खूब गुलछर्रे उडा रहा है। नयी नौकरी मिली तो जैसे तकदीर खुल गयी। प्रतिदिन किसी न किसी कन्या वाले घर मे चायपार्टी उडती है।"

थोडी देर मे मीनू बोली—"देखो भैया, यह वही भ्रमरदास मालूम हो रहा है। आप पख पसारकर हर ऐसे घाट मे जा लगते है, जहाँ किसी कन्या की गध आती है, पर आप कही बँधते नही है।"

भैया ने समर्थन किया, बोला—"यह प्रेम का परमहस है। पक्का

खिलाडी है, यद्यपि इसे स्पोर्ट नही कहा जा सकता, नीर से क्षीर पीकर भग जाता है।"

प्रद्युम्न थोडी देर के लिए सुरधुनि को छोडकर चने-मुरमुरे खरीदने गया हुआ था। इतने मे पीछे की कुर्सी की मीनू सामने

प्रेम का परमहस.

की खाली कुर्सी पर बैठ गयी, बोली—"जब तक आपके मित्र लौटकर नही आते, तब तक के लिए यदि आपको आपत्ति न हो तो मै बैठ जाऊँ। इस कुर्सी से खेल ज्यादा अच्छा दिखायी देता है।"

पति के सम्बन्ध मे इस प्रकार का इगित सुनकर सुरो झेप गयी और कुछ बोल नही सकी। पीछे से भैया ने बात चलायी—"ईडन गार्डन या देवताओ के उद्यान मे जो खेल इस समय हो रहा है, इसे विवाह-बाजार भी कहा सकता है।"

मीनू बोली—"बुरा क्या है ? जो होना है वह कही भी हो सकता है। यह जगह बुरी क्या है ?"

इसके उत्तर मे भैया ने पीछे से एक कागज की पुडिया फेककर मारी, बोला—"तुम जिस सीट पर बैठी हो, उसमे भी कुछ अर्थ है।"

मीनू जरा भी नही झेपी बल्कि मुस्कराकर बोली—"मेरे हाथ

मे पड जाय, तो सिट्टी-पिट्टी भुला दूँ, छठी का दूध याद करा दूँ और लेने के देने पड जायँ ।"

सुरधुनि कुछ हिलकर बैठी । उसने सोचा कि सचमुच इस लडकी के हाथ मे बाग बाजार की परम्परा एक दिन मे हवा हो जाती । पर गुरुजनो के सम्बन्ध मे ऐसा सोचना शायद ठीक नही है । प्रद्युम्न भी लौटने मे देर लगा रहा है ।

उधर से भैया ने फिर शुरू किया—"शायद यह हजरत भी पहले-पहल एक निरीह मृग की तरह प्रेमारण्य मे प्रविष्ट हुए हो, पर तुम्हारी तरह चित्रागदाओ ने "

"इस युग मे चित्रागदा कहाँ है ?"—मीनू का स्वर कौतुक के कारण जलतरग की तरह बज उठा ।

प्रेमारण्य में मृग.

"जरूर-जरूर, वे चित्रागदाये तो है, पर उनके अग-अग मे स्नो, पाउडर, रूज़, लिपिस्टिक चित्रित करती है ।"

"देखिए, भैया कैसी अजीब बात कर रहे है। इन्होने तो जैसे आधुनिक स्त्रियो के विरुद्ध धर्मयुद्ध-सा घोषित कर रखा है। आप जरा मेरी तरफ से दो शब्द कह दीजिए न।"--कहकर उस अपरिचित स्त्री ने सुरधुनि को टिहुनी से मारा।

सुरधुनि स्तम्भित हो गयी, पर कुछ बोल न सकी। वह मुस्करायी फिर कुछ समझकर बोली—"आप अकेली ही सौ के बराबर है। मै भला आपकी मदद क्या कर सकती हूँ ?"

अपरिचित महिला बोली—"वाह आप कहिये, खुलकर कहिये। आप यह क्यो नही कहती कि हम लोगो को शिकार करने की जरूरत नही होती, लडके खुद ही आकर हमारे जाल मे फॅस जाते है।"

भैया ने चश्मा सॅभालते हुए कहा--"यह बात हो सकती है, पर जब तरुणियाँ शिकार के लिए निकल पडती है, तो वे इधर-उधर तीर मारती है।"

मीनू बोली—"पर इससे कोई घायल नही होता।"

सुरधुनि हॅस पडी। मीनू फिर बोली—"जरा नटवर श्याम की कहानी तो सुनिए। यह वह हिरन के बच्चे है कि खुद ही शिकारियो की तलाश मे घूमते रहते है, अन्त तक तीर खाते-खाते यह ऐसे हो गये कि कुमारी मृगया मित्र ने घायल कर दिया।"

"मृगया मित्र ? नाम कुछ ज्ञात-सा लग रहा है।"

"जरूर ज्ञात होगा। बात यह है कि आप मे से हर एक मृगया-मित्र है। यदि न हो तो मेरा तो यहाँ तक कहना है कि होना चाहिए।"

मीनू ने सुरधुनि की तरफ देखते हुए कहा—"आपने सुन लिया। ये हम लडकियो को आखेट के लिए निकली हुई बताते है। परिस्थिति यह है कि शादी के बाद ससुराल के लोगो के धक्के सम्हालने के बाद अपने को सम्हालना कठिन हो जाता है। आप क्या कहती है ?"

इन लोगो की बातचीत सुनकर सुरो की अजीब हालत हो रही थी। इन लोगो के रग-ढग और बातचीत अजीब थी। यदि कही ऐसे वातावरण मे रहना सम्भव होता, तो कितना अच्छा होता, फिर तो उस घुटन से बचना आसान हो जाता।

सुरो ने अपने चारो तरफ देखा और वह अजीब पशोपेश मे पड गयी। अन्त मे उसने कहा—"बडे घरो की बहुओ का जीवन अजीब होता है।"

पीछे की कुर्सी को जरा पास लाते हुए भैया ने कहा—"पर हमारे नटवर श्याम भाई शादी करना ही नही चाहते। वे तो समझते है कि शादी हुई कि बरबादी हुई। और भॉवरे पडी कि भॅवर मे फॅस गये।"

"बेचारे के लिए बडा दुख हो रहा है।"—सुरधुनि ने चुपके से मीनू के कान मे कहा।

पर भैया बात लेकर उड गये, बोले—"बिल्कुल नही। यह सरासर गलत बात है। जब शादी नही हुई तो क्रिकेट का रन बनाना जारी रहेगा।"

इतने मे प्रद्युम्न लौट आया। उसके हाथ मे चने-मुरमुरे के तीन-चार पैकेट थे, बोला—"जब मैच मे कोई रस नही रहा, तो लो इसी रस का आस्वादन करो।"

मीनू प्रद्युम्न की कुर्सी पर बैठी हुई थी। वह जरा भी घबराये बिना बोली—"इनसे मेरा परिचय हो गया, आप अगर बुरा न माने तो पीछे की कुर्सी पर जाकर बैठिये और जो मजेदार बातचीत चल रही है, उसे सुनिए।"

भैया के साथ परिचय हो जाने पर भैया ने क्रिकेट के रन वाले उसी प्रसग को चलाया और कहा कि इस खेल मे क्रिकेट के खेल के मैदान के बदले चाय की बैठक ही कर्मक्षेत्र होता है। क्रिकेट के खिलाडियो की तरह पैड आदि न बॉधकर बडा नीरस नफीस चश्मा लगाया जाता है। दूसरे फील्डर प्रतीक्षा करते रहते है, जैसे कन्या की बहने, सहेलियॉ, भाभियॉ इत्यादि।

प्रद्युम्न के लौटने पर सुरधुनि कुछ कुठित हो गयी थी, पर इन बातो को सुनते-सुनते वह हॅसी रोक न सकी। चारो तरफ अपरिचित पुरुषो के बीच मे ही पीछे लौटकर सुरधुनि बोली—"आप तो कमाल की मजेदार बाते करते है।"

भैया ने इसके उत्तर मे हाथ उठाकर नमस्ते किया। बोले—

"थैक्यू मैडम ! उसके बाद सुनिए। कन्या के इर्द-गिर्द जो चुपके-चुपके बाते होती रहती है, उनसे एक वातावरण उत्पन्न होता है। बाउण्डरी के आस-पास, विकेट से दूर, स्क्रीन के पीछे पडौसी तथा रिश्तेदार दर्शक रहते है। जो पियानो कभी बजाया नही गया, वह पियानो तथा कन्टिनेन्टल साहित्य की इधर-उधर फैली हुई किताबे भी वातावरण को रूप और रग देती रहती है।"

मीनू ने तडाक से तमाचा मारते हुए कहा—"पर आपने दूल्हा के मित्रो की बात तो कही नही।"

"नही, नही, उनका भी काम है। वे एवजी या डिड नाट बैट वालों मे है। यदि खेल खतम हो गया, तो उन्हे फिर मौका नही मिलता।"

सुरधुनि मीनू से बोली—"कुछ भी हो, आपके भैया बडे मजे मे बाते करते है।"

भैया कहते गये—"पात्र आकर चाय की मेज पर बैठता है। पहले वह देखता है कि जिस केक को कन्या के हाथ का बना हुआ बताया गया, वह सबसे बडे रेस्टोरेन्ट का बना हुआ है। जिन्हे यह बतलाया गया कि ये कन्या की काढी हुई चीजे है, वे बाजार से किराये पर लायी गयी है। जिन पुस्तको मे कन्या की रुचि बतायी गयी है उनके पन्ने अभी तक काटे नही गये।"

मीनू कह उठी—"जब चारो तरफ इतना धोखा है तो ईश्वर का नाम लेकर शादी वाली रस्सी मे लटक जाना ही श्रेयस्कर है।"

"नही, नही, हमारे बैटमैन भी दूध के धुले हुए नही है। वे पक्के खिलाडी है। इसलिए वे चारो तरफ दृष्टि रखकर विकेट सम्हालने लगे। ऐसे समय विकेट-कीपिग के लिए होने वाली सास मैदान मे आयी। मीनू ने फन-सा उठाते हुए कहा—"सास माने 'मदर-इन-ला'? ओ हो ! मै इसी जजाल के कारण कभी शादी नही करूँगी। ससुराल के और सब लोगो को तो किसी तरह खुश रखा जा सकता है पर सास उससे तो ईश्वर ही बचाये। यह नही हुआ, वह नही हुआ, घूँघट एक इच नीचे है, बस बिगड खडी हुई। मालूम है ईसाइयो मे एक

साथ दो विवाह गर्हित क्यो समझे गये है ? इसकी सजा क्या है ?"

"जेलखाना और क्या ?"

"नही, अभी नही बता पाये ।"

"सामाजिक निन्दा ।"

"नही, अब भी नही बता सके । मेरी राय मे एक साथ दो विवाह करने मे सबसे बडी खराबी यह है कि दो सासे मिलती है ।"

"ठीक है, आजकल अमेरिका मे गुडे स्त्री के बदले सास को उठा ले जाते है और चिट्ठी डाल देते है कि फलानी जगह रुपये रख दो, नही तो सास को रिहा किये देते है ।"

सुरो ने अर्थपूर्ण दृष्टि से मीनू को देखा और फिर धीरे से उस का हाथ दबा दिया । प्रद्युम्न ने यह बात देखी तो उसने खुश होकर भैया से कहा—"अच्छा बताइये तो सही कि इसके बाद क्या हुआ ।" फिर प्रजापति देवता की क्रिकेट की कहानी शुरू हुई । कन्या की माता बैठक मे दाखिल होकर बैट्समैन पर नजर रखने लगी । इसके बाद कन्या खेल के मैदान मे आ धमकी । चारो तरफ बातो-बातो मे तालियाँ पिट गयी । पात्र के साथ चार आँखे होते ही उसने बैट की तरह हाथ बनाकर नमस्कार किया । इसके बाद लडकी ने फिर कर-कमलो को जोडकर नमस्ते का उत्तर दिया, मानो उसने गेद फेका । अब प्रश्न यह आया कि पात्र बाउण्डरी करके साफ निकल जायगा, या कैच आउट होगा या क्लीन बोल्ड । कन्या ने तो गेद फेका, पर कई बार ऐसा भी हो जाता है कि कोई पडौसिन या कन्या की किसी सहेली ने बीच ही मे बैट्समैन को समाप्त कर दिया ।"

मीनू ने प्रश्न किया—"जब कन्या खेल मे उतर जाती है, तो दूसरी फील्डरे क्यो रहती है ?"

"वे इसलिए रहती है कि मौका पडने पर काम आये । मौका देखकर वे खिसक भी सकती है और पास भी आ सकती है । उनकी खास जरूरत तो इसलिए है कि बैट्समैन बाउण्डरी बनाकर निकल न जाय । उसे फँसाना ही फील्डरो का काम है ।'

प्रद्युम्न बोला—"तब तो बैट्समैन की बडी मुसीबत रहती है ।"

मीनू ने तेज तलवार की तरह उत्तर दिया—"मुझे तो कन्या की हालत पर ही दुख हो रहा है कि वह स्वय तो शिकार की तरह है।

प्रजापति का क्रिकेट खेल

न वह कुछ चुन सकती है और न जाँच कर सकती है।"

सुरो ने मुस्कराकर मीनू का समर्थन किया। मीनू ने थोडी देर रुककर कहा—"हाँ, एक बार शादी हो गयी, तब तो स्त्री का जोर बहुत बढ जाता है। मान लो ईस्ट बगाल और मोहन बगान के मैच मे मियाँ-बीवी गये हुए है। इतने मे मियाँ की पहले की गर्ल-फ्रैड सामने आकर कहती है—'हैलो', तब क्या हालत होगी ?"

अब सुरो से रहा नही गया, बोली—"ऐसी भी परिस्थिति हो सकती है कि वह अपनी गर्ल-फ्रैड के साथ खेल देखने गया है और उधर से पत्नी ने आकर कहा—'हैलो', तो क्या होगा ?"

"यह आपने बहुत अच्छी बात कही।"

मीनू एकदम से जोश मे आ गयी और उसने एकदम से सुरधुनि को आलिगन मे जकड लिया, बोली—"सारे कलकत्ते मे मैने आपकी तरह दूसरी स्त्री नही देखी। आप स्त्रियो की लीडर हो सकती है। मेरे साथ नारी-समिति मे नाम लिखाइये।"

अकस्मात् ताव मे आकर वह इतनी सुन्दर बात कह सकती है, इसका सुरधुनि को अनुमान नही था, पर उसका मन जागृत था। जो कुछ कसर थी वह इतनी ही थी कि कही से कोई ज्वार का धक्का आकर उसकी कडी तडका दे।

उसके बाद भैया ने फिर कहानी शुरू की—"लडकी गेद फेकती है, लडका उसे बैट से रोकता है, कन्या की माँ विकेट की रक्षा करती है और कन्या-पक्ष फील्डिग करता है।"

मीनू ने उसे रोकते हुए कहा—"पर ओवर में ६ के बजाय ५ बॉल होते है, क्योकि पचशर वाला मामला ठहरा न।"

प्रद्युम्न ने प्रश्न किया—"और अम्पायर?"

चने-मुरमुरे की खाली थैली झाडते हुए भैया ने कहा—"अम्पायर है वह जो मध्यस्थ बना है। अर्थात् लडकी या लडके का कोई मित्र। अम्पायर है प्रजापति। हृदय मे आहत होने से वह हिट विकेट बोल्ड एल० बी० डब्ल्यू होगा या बोल्ड आउट इस पर राय अम्पायर ही दे सकता है। असल मे वह आउट होकर भाग न सके यह देखना आवश्यक है।"

इस प्रकार बातचीत होते-होते खेल खत्म हो गया। सुरधुनि ने मीनू का हाथ पकडकर कहा—"तो आज यही तक रहा। आपके साथ बातचीत मे बडा आनन्द आया। ऐसा मालूम होता है कि आज मैने अपने आपको पहिचाना है।"

मीनू ने भी जोश मे आकर कहा—"अवश्य ही आप अपने को पहचान पायेगी। हम लोग यही चाहती है कि स्त्रियाँ अपने पैरो पर

२२

इसके अगले दिन की बात है। सारी रात सुरधुनि ने मीनू को स्वप्न मे देखा। उसने मन ही मन यह कल्पना की कि यदि मीनू को सुरधुनि की सास आदि का सामना करना पडे, तो वह कैसा व्यवहार करे। इस प्रकार की कल्पना मे भी आनन्द था। उसने कल्पना की कि मीनू शाम के समय घर से निकल रही है। इतने मे यदि भैया से भेट हो गयी, तो क्या होगा ? अवश्य ही मीनू की चितवन मे कोई ऐसी बात होगी जिससे वह उसे घायल करके मोटर मे जा बैठेगी।

मान लो कि कौशल्या फूफी से मीनू की भेट हो जाय, तो वह क्या करेगी, वह कहेगी—फूफी जी, आपको भला यह भी सुध नही रही कि गगा-स्नान का समय हो गया, कही देर न हो जाय, कहकर वह भाग जायगी।

और कही सास महोदया से भेट हो गयी तो कहेगी—माता जी, आप भी मेरे साथ चले। बात यह है कि थोडी हवाखोरी अच्छी होती है।—कहकर वह बिना प्रतीक्षा किये आगे बढ जायेगी क्योकि वह मन ही मन अच्छी तरह जानती है कि सन्ध्या के पवित्र समय मे इस म्लेच्छ नगरी मे बडी भीड़ रहती है और किसी प्रकार साफ रहकर चलना सम्भव न होगा। इसी कारण मोक्षदा कभी भी हवाखोरी मे साथ न देगी। बहू को अपनी मनमानी करने से न रोकेगी।

दिन भर इसी प्रकार की बाते सुरधुनि के मन मे उठती रही। वह चचल और अस्थिर हो उठती थी। यहाँ तक कि प्रद्युम्न ने पूछा—"क्या बात है ? तबियत तो ठीक है न ?"

"नही, मै बिल्कुल ठीक हूँ।"

"मुझे भी अच्छा लग रहा है। ऐसा मालूम हो रहा है कि मै तुम्हे फिर से पा रहा हूँ।"

सुरधुनि हँस पडी। बोली—"यह क्या अजीब बात है ! फिर से पाने का क्या मतलब है ? तुम तो हमेशा ही कुछ दूसरी बात कहा करते हो !"

प्रद्युम्न बोला—"पहले पाने का मतलब था, पाकर सन्दूकची मे बन्द कर दिया, और खुद गद्दीदार बनकर बैठ गये। अब मै इसे पाना नही मानता।"

सुरधुनि बोली—"अच्छा तुम्हारा मतलब आधुनिक ढग से पाने का है यानी तितली के ढग पर इधर से उधर उडते रहे। इसी को शायद रेडी ढग से पाना कहते है। भला ये कम्युनिस्ट कौन है ?"

प्रद्युम्न बोला—"जनता के कॉमन इष्ट मे सबसे कम अनिष्ट होगा, ऐसा जो लोग कहते है, वे ही कम्युनिस्ट है। हमारे कालेज मे कुछ ऐसे लोग मौजूद है, जो लाल झडे वाले है। पर जाने दो उन बातो को। चलो आज तुम्हे क्रन्दन सागर दिखलावे। यह गगा के ही किनारे है।"

"हमे क्रन्दन सागर देखना नही है, कही हास्य सागर हो तो वहाँ ले चलो।"

प्रद्युम्न बोला—"तुम्हे दोनो चीजे दिखलाऊँगा। वह किस स्थान पर है, अभी तुम्हे नही बताऊँगा। एक नया ड्राइवर आज हमारी गाडी को चला रहा है। वह सब कुछ जानता है। चलो आज जरा जल्दी निकल चला जाय। माँ को समझा-बुझाकर राजी कर लो।"

सुरधुनि बोली—"समझाने-बुझाने की क्या जरूरत है। कह दिया जाय कि उस घर मे आज रिश्तेदार आ रहे है। कौन खबर लेने जा रहा है। मै एक बात कहे दे रही हूँ कि तुम भी किसी से कुछ न बताना और सुनो, आज जल्दी लौटना नही है। जब हम अधिक रात हो जाने पर उस घर मे जायँ, तो उधर कह दिया जाय कि इधर बहुत से रिश्तेदार आये थे, इस कारण देर हो गयी।"

प्रद्युम्न ने सोचा कि सुरधुनि एक दिन मे ही बदल गयी। वह स्वय पकड मे आ रही है, लापरवाही से बातचीत कर रही है, स्वतन्त्र वातावरण मे तितली की तरह पख पसारकर उड रही है।

वह आज अपनी सास की पतोहू नही, अपने पति की प्रेयसी है जिसे इटालियन भाषा मे कारा मियाँ कहते है। आज वह स्वतन्त्र है।

कारा मियाँ शब्द मे कितना माधुर्य है, यह स्वदेशी सन्देश नही, वेनिस नगरी का लेमन केक है। आज वह सनातन बगालिन एक नये रूप मे सामने आ रही है और सो भी बहुत पास । यह केवल गठबधन के द्वारा बाँधी हुई धर्मपत्नी नही है, प्रेयसी है जिसे पाने के लिए बडी लम्बी साधना करनी पडती है। हजारो मे सुरधुनि ही का व्यक्तित्व है, जो अभिमान और लोक-लज्जा सब बातो की परीक्षा मे उत्तीर्ण होकर मन के निकट बढ आयो । इसलिए प्राप्ति की पूर्णता भी गहरी है। आज फूलो की माला की दूरी भी खटक रही है। देह तो सीमित है, पर आत्मा असीम मे आकर मिल रही है।

गगा के किनारे मोटर हवा हो गयी। साथ मे दो व्याकुल प्राण थे, जो मिलन के लिए उत्सुक थे। आज कोई आसपास नही था, न कोई बाधा थी और न कोई बधन। चारो तरफ सुनसान था। सामने बैठा हुआ शोफर भी लुप्त-सा हो गया था। उसके सिर की टोपी सामने की तरफ खिची हुई थी। वह एकाग्र मन से मोटर चला रहा था। सामने की सीट और पीछे की सीट के बीच काँच का पर्दा पडा हुआ था। गगाजी पर स्तब्ध स्टीमर अपने फनेल निकालकर मानो उन्हे विश्व के अनन्त मे निमत्रण दे रहे थे।

सुरधुनि बोली—"उस दिन के नाटक मे कुछ मजा नही आया।"

प्रद्युम्न बोला—"क्यो ? नाटक तो बहुत ही सुन्दर था और था भो बिल्कुल आधुनिक। नाम भी था—'दिल्ली का लड्डू'।"

"कुछ भी हो, मुझे अच्छा नही लगा । इसमे नाटक का कोई दोष नही था।"

"फिर क्या बात थी ? जब नाटक अच्छा था, अभिनय भी अच्छा था, तो फिर क्या बात थी ?"

वह फिर कह उठा—"इतने लोग चिक के पीछे से देख रहे थे,

फिर भी अच्छा क्यों न लगा ?"

पर सुरधुनि आज दूसरे ही लोक मे विचरण कर रही थी, बोली—"बात यह है कि चिक के अन्दर से देखने के कारण मन पर बोझ पड रहा था। यह मै जानती हूँ कि तुम्हे यह पसन्द नही, पर तुम बिगड क्यो नही खडे होते ? सैकडो बाधाओ और लोकाचारो से तुम मेरा उद्धार क्यो नही करते ? उन लोगो के सामने ऐसा मालूम होता है, जैसे मै मै नही रहती और तुम्हे भी असहाय पाती हूँ। ऐसा भला क्यो होता है ?"

उसकी बातो मे उत्तेजना का कुछ पुट आ गया था। जल्दी ही उसने प्रद्युम्न के कन्धो पर अपना सिर रख दिया। कितनी निश्चिन्त निर्भरता थी ?"

थोडी देर बाद सुरधुनि बोली—"चलो आज हम नाटक देखने चले। उसी नाटक को देखेगे।"

"क्यो, उसे तो एक बार देख चुकी हो। चलो कोई और नाटक देखे।"

सुरधुनि बोली—"नही, उसी मे चलेगे। शादी के बाद पहला नाटक इस प्रकार नीरस होकर हमारी स्मृति मे जमा रहेगा, इसे मै सहन नही कर सकती। आज हम दोनो एक साथ बैठकर उस दिन का बदला निकालेगे। आज मै अभिसारिका बनी हूँ।"

प्रद्युम्न बोला—"बिल्कुल ठीक है। चलो वही चलेगे। भीड के बीच मे ही हमारा अभिसार सम्पूर्ण होगा। ड्राइवर, श्याम बाजार चलो।"

सीधे उस तरफ न जाकर मोटर देर तक निर्जन रास्तो मे चक्कर काटती हुई भीड के रास्ते मे आ गयी। अब गाडी की गति मन्थर हो गयी। ट्राम के लिए प्रतीक्षा करने वाले लोग गाडी से सटकर कई बार खडे मिलते थे और उनकी उत्सुक दृष्टि गाडी के अन्दर पड़ती थी। सुरधुनि के सिर पर घूँघट न मालूम कब और थोडा नीचे उतर चुका था।

प्रद्युम्न ने इसे देखा। उसके मन मे डर था कि कही नई स्वाधीनता

पर पर्दा न पडे । कही जनता की बलुई मिट्टी मे उसकी हृदय-स्रोत-धारा लुप्त न हो जाय । पर प्रद्युम्न भी कमर कस चुका था कि किसी भी तरह अपने को खोयेगा नही । महादेव के ध्यान-भग की साधना की बात लिखकर कालिदास अमर हो गये है, पर नयी दुलहिन के ध्यान-भंग की बात भी किसी ने लिखी है ? यह तो और भी कठिन है । क्या किसी कवि को इसका तजुर्बा नही हुआ ? क्या वे ऐसा समझते रहे कि जीवन के प्रथम दिन से ही नारी की निद्रा टूट जाती है ।

और यदि कही वह नारी रिश्तेदारी के पहरे मे बॅध गयी, और फूफियो, चाचियों, मौसियो के परिहास और सहेलियो की मुस्कराहट मे दब गयी, तब तो उसकी निद्रा भग करना और भी कठिन हो जाता है । यह तो पहले ही प्रमाणित हो चुका है कि वह नीद तोडने के लिए तैयार है, पर कलकत्ते की ईट और लकडी के किले मे आकर वह फिर से कैदिन बन गयी है ।

इसलिए हल्की हॅसी के द्वारा काम शुरू हुआ । सुरधुनि लोक-चक्षु के अन्तराल मे जग उठने के लिए तैयार थी, पर उसे सबके सामने जगाना है ।

बात चलाने का एक मौका पाकर प्रद्युम्न बोला—“तुम्हे एक मजेदार बात बताऊँ । मेरे एक मित्र सुजित विलायत मे पढने के लिए गये हुए है । वहाँ सह-शिक्षा है । उसने वहाँ जाकर जो कुछ बातचीत सुनी है, उसी मे से एक मजेदार घटना यह है ।”

“अवश्य सुनाओ । तुम्हारे मित्र के हथकडे अवश्य ही बहुत ही दिलचस्प होगे ।”

“नही, नही, उनके हथकडे अभी शुरू नही हुए, अभी तो सुनो-सुनायी बाते है । अभी सीख रहे है । बाद को शायद खुद भी हाथ बढाये । दो सहेलियाँ कालेज के कॉमन रूम मे बातचीत कर रही थी । एक ने दूसरी से कहा—“डाक्टरो का कहना है कि चुम्बन करना स्वास्थ्यकर नही है, क्या तुम भी इसी राय की हो ?”

लूसी बोली—“मेरी राय यह नही है ।”

सूसी बोली—"तुम शायद कभी "

इस पर लूसी बोली—"नही, नही, मै कभी बीमार नही पडी।"

यह कहानी सुनकर सुरधुनि के कपोल लाल नही हुए पर हँसी के मारे उसकी साँस बन्द होने लगी। प्रद्युम्न यह देखकर बहुत खुश हुआ, और उसने फिर कहानी शुरू की—"पता नही सुजित का क्या हाल हो ? वह हमेशा लडकियो से अधिक हेल-मेल रखने वाला है। उसका मन हमेशा से तैयार है कि वह लडकियो का प्रिय बने। यही से उसने सबक शुरू कर दिये थे। पहला यह था कि जब तुम्हे अपनी प्रेयसी मिले, तो उसके हाथ पकड लो।"

"दूसरा पाठ क्या है ? जान लेना अच्छा है।"

"इसके बाद हाथ जरा दबा दो जिससे उसे यह ज्ञात हो जाय कि तुम उससे प्रेम करते हो।"

"तीसरा पाठ क्या है ?"

"तीसरा सबक यह है कि हाथ बढाकर उसे जरा आहिस्ता से छू लो, जिससे उसे पता चले कि फिर तुम आगे भी उसे छुओगे।"

"छि तुम तो सबक मे बडे पटु मालूम होते हो।"

प्रद्युम्न जरा सोचकर बोला—"इसके बाद का पाठ बताता हूँ, सुनो। इसके आगे बस यही रह जाता है कि अपनी प्रेयसी को साथ मे लेकर टहलने जाओ।"

"तो मालूम होता है कि जो कुछ आप कर रहे है वह सब उसी पाठ के मुताबिक कर रहे है। अगला सबक बताओ।"

"उसके बाद है पुस्तको के पन्ने फाड डालना और आगे अपनी बुद्धि से परिस्थिति का सामना करना।"

सुरधुनि ने पूछा—"फिर तुम्हारे मित्र ने क्या किया ?"

प्रद्युम्न बोला—"इगलैण्ड जाकर मित्र की शिक्षा कहाँ तक बढी यह नही मालूम, पर वह हम लोगो से कह गया है कि वह प्रिस चार्मिग बनने की साधना करेगा। चेहरा अच्छा है, और साथ ही पैसो की भी कमी नही है। वह यह भी कह गया है कि वह ऐसी लडकी से प्रेम करेगा, जिसने इसके पहले किसी से प्रेम नही किया हो।"

"समझ गयी, समझ गयी"—कहकर सुरधुनि लोटपोट हो गयी। बोली—"यानी मतलब यह है कि तुम्हारे मित्र अछूती कली से प्रेम करना चाहते है। अछूती कली से इसलिए कि वे उसकी पखुंडियाँ नोच डाले।"

"तुमने बहुत अच्छा कहा। कमाल की बात कही।"

"तुम्हारे मूर्ख मित्र जिस मुसीबत मे मुब्तिला होगे, वह अब मै बता सकती हूँ। वे प्रेम के फदे मे न फँसकर ब्याह के फदे मे फँसेगे।"

"तुमने यह कैसे समझ लिया ?"

"मै स्पष्ट ही देख रही हूँ कि उन्हे कोई ऐसी लडकी मिलेगी जो प्रेमी खोजने के बजाय पति खोज रही होगी।"

जरा थमकर सुरो फिर बोली—"जब तुम्हारे मित्र प्रेम मे व्याकुल होकर अपनी प्रेमिका से कहेगे—'मै तुम्हारे योग्य थोडे ही हूँ।' तब वह लडकी कहेगी—'ऐसा तो होना तुम्हारे लिए मुश्किल है, पर अन्य लडकियो के तुम योग्य हो इसलिए आओ शादी करें'।"

प्रद्युम्न बोला—"वह बात ठीक है, प्रेम मे लोग बुद्धिहीन हो जाते है और शादी मे फँस जाते है। शादी के बाद लोग स्त्रियो का दोष देखना शुरू कर देते है।"

सुरधुनि बोली—"इस मामले मे तुम्हारे मित्र को इसका मौका नही लगेगा। ज्योही तुम्हारे मित्र दोष निकालना शुरू करेगे, त्योही वह विदेशी लडकी कहेगी—'मुझ मे दोष है, तभी तुम से अच्छा दूल्हा नही फँसा पायी।' अब कहो इसके आगे तुम्हे क्या कहना है ?"

सुरधुनि ने जिस प्रकार से अपने व्यक्तित्व को प्रकट किया, वह देखकर प्रद्युम्न बहुत खुश हुआ। बोला—"मान लो इसके उत्तर मे मेरे मित्र कहे कि इतने दिनो से मै तुम से प्रेम करता हूँ, फिर भी ”

"फिर भी क्या ? क्या पेन्शन लोगे ?"

प्रद्युम्न से आगे कुछ कहते नही बना, बोला—"स्त्रियाँ कितनी चालाक होती है।"

सुरधुनि का नव-जागृत व्यक्तित्व उस्तरे की तरह पैना हो गया था, वह मुस्कराकर बोली—"क्या तुम पुरुष ही कम चालाक हो ? शादी के पहले तो आसमान के तारे तोड डालने की प्रतिज्ञा हो जाती है। पर बाद को किस प्रकार छोटी-छोटी बात पर झगडे होते है। स्त्रियो को तुम चालाक कह रहे हो, पर मै तो कहती हूँ कि वह बडी बेवकूफ है जो चिकनी-चुपडी बातो मे फँस जाती है।"

प्रद्युम्न ने अपने स्वर मे घनिष्ठता लाते हुए पूछा—"तो फिर वैसी हालत मे स्त्री को क्या करना चाहिए ?"

"क्या करना चाहिए ? यह भी कोई कहने की बात है ? प्रेमी से कहना चाहिए—हाँ, सभी बाते ठीक है। पर इस वर्णन के अनुसार मै एक कुत्ता पालना चाहूँगी, तुम उसमे सहायता दो।"

तरुण पति हँस पडा, बोला—"तुम लोग न केवल चालाक हो, बल्कि लोगो को लेकर खेलना चाहती हो, चाहे प्राचीना हो या आधुनिका, सबका यही हाल है।"

"तुम आधुनिकाओ की बात बताओ।"

"आधुनिकाएँ प्रेम करती है, तब विवाह करती है। उनका कहना है कि विवाह तो मामूली चीज है, पर प्रेम वह रोगनजोश है जिसके बिना कोई ठाठ-बाट वाला खाना नही होता। सुनो, एक आधुनिका की कहानी सुनो। मेरा एक मित्र है प्रेमोत्पल। वह कम उम्र मे ही पक चुका है। वह एक बार रोडोडेनड्रन रोड की एक लडकी के प्रेम मे पडकर अपने को इस प्रकार भूल गया कि उसे घर लौटना भी नही रुचा, पर लडकी तो केवल उसे उल्लू बनाना चाहती थी। कवियो ने यह जो कहा कि 'जो मजा इंतजार मे देखा, वह न वस्ले यार मे देखा' मत की उपासिका थी।

"प्रेमोत्पल एक दिन रात को विदाई के समय गुडनाइट कर उठा, तो वह नाजनीन बोली—'गुडनाइट क्यो कहते हो डार्लिग, गुड-मार्निग कह दो तो क्या बुराई है ?' इस पर प्रेमोत्पल लज्जित होकर उठ पडा। पर वह निर्णय चाहता था। जाने पचशर मे से कौनसा शर रोडोडेनड्रन रोड की लडकी पर लगा, यही वह जानना चाहता था।"

"अब बताओ कि आगे क्या हुआ ?"

"प्रेमोत्पल ने मादामोआजल का हाथ पकडकर कहा—'बताओ तुम मुझ से शादी करोगी या नही ? यदि तुम ना कर दो, तो मै मर जाऊँगा।' इस पर उस रोडकी मिस बाबा बोल उठी—'इसके लिए तुम कोई चिन्ता न करो । यदि सही समय मे खबर मिली, तो मै फूलो के दो-चार गुच्छे घर भिजवा दूँगी।"

सुनकर सुरधुनि का यह हाल हुआ कि हँसते-हँसते पेट फूल गया। "ऐसा मालूम हो रहा है कि मै पृथ्वी पर नये सिरे से उत्पन्न हो रही हूँ। तुम्हारे घर की मौसी, फूफी और ऊँची दीवारे अब मुझे रोक नही सकती। मै तुम्हे भी अब दबकर न रहने दूँगी। आज से हम बालिग हो गये।"

प्रद्युम्न बोला—"तुम ठीक ही कह रही हो, तुम्हारा साहस देखकर मुझे उत्साह हो रहा है।"

"तुम्हे पहले ही इस सम्बन्ध में आगे बढना चाहिए था। बाहर तो तुम लोग सब तरह से दबे हुए हो ही, घर के अन्दर भी तुम दब कर रहते हो।"

प्रद्युम्न ने बातो का रुख फेरते हुए कहा—"यह देखो रास्ते के दोनो तरफ कितने सिनेमाघर खुले है ? यह जानती हो कि इनमे स्त्रियो की भीड अधिक क्यों होती है ?"

"यह तो मर्दो को ही मालूम होगा, तुम्ही बतलाओ मामला क्या है ?"

"बात यह है कि इधर देशी चित्र दिखाये जाते है, और ये चित्र स्त्रियो को अधिक इसलिए भाते है कि वे समझती है कि इनके सेवन से उनका यौवन अक्षुण्ण रहता है। वे चाहे भद्दी और मोटी हो जाये, पर इन चित्रो को देखकर उन्हे यह भ्रम होता है कि वे नायिका बन सकती है। न तो किसी तरह का व्यायाम करना पडता है, और न और कुछ, वे तो चिर-षोडशी बनी ही रहती है।"

"तुम लोग भी तो चिर-बडविशी बने रहना चाहते हो।"

"हो सकता है, पर हमे बनने कौन देता है ? नायक की उम्र

बढ गयी, तो नायिका का प्रेम ही नही जगता। सिनेमा में नायक की उम्र बढ गयी, तो बस आफत हो जाती है। चारों तरफ से

तालियाँ पिटने लगता है, और दर्शिकाएँ गालियाँ देती है, पर नायिकाओ के सात खून माफ है।"

"शायद उन मोटी नायिकाओ के कारण ही सिनेमाघरो के पर्दे इतने कँपते रहते है ?"

"तुमने ठीक कहा है। उस कम्पन को तुम शिवेलरी का सिहरन भी कह सकती हो।"

मोटर आकर थियेटर के सामने रुक गयी। प्रद्युम्न दरवाजा खोलकर उतर आया और साथ ही साथ सुरधुनि भी उतरी।

घूँघट माँग से ऊपर उठ चुका था । दोनो के चेहरे सहज सरल हँसी से उद्‌भासित थे और वे एक दूसरे का हाथ पकडकर थियेटर के अन्दर दाखिल हुए । न कोई लज्जा थी, और न कोई बाधा । सास, मौसी, फूफी, पडौसिनो की कोई बाधा की छाया तक यहाँ नही थी । यहाँ तो निर्बाध मुक्त स्वाधीनता थी ।

नारी आज अर्धमानवी के रूप मे जाग उठी थीं । उसमे आकर आधी कल्पना मिल गई थी । आज का अभिनय उनके जीवन मे बराबर चलता रहेगा ।

ड्राइवर की सीट से उतरकर नीहार ने कनटोप उतार लिया और बालो मे हाथ फेरते हुए प्रेक्षागृह की ओर देखा, उसका चेहरा मुस्करा रहा था । बाहर और भीतर चारो तरफ रोशनी ही रोशनी थी ।